अंकों की कहानी

गुणाकर मुले

ज्ञान-विज्ञान माला

अंकों की कहानी

गुणाकर मुले

ओरिएंट लौंगमन

© ओरिएंट लौंगमन लिमिटेड

रजिस्टर्ड आफिस
५०, सुंदर नगर
नई दिल्ली–३

शाखाएँ

~~बम्बई~~
कलकत्ता
नई दिल्ली
मद्रास

मूल्य
रुपये [illegible]

भारत में मुद्रित

प्रकाशक
वा. ह. पटवर्धन
मैनेजर
ओरिएंट लौंगमन लिमिटेड
३/५, आसफ अली रोड
नई दिल्ली

मुद्रक
सुजित पटवर्धन
संगम प्रेस लिमिटेड
१७ कोथरूड
पूना–२९

अपनी बात

प्राचीन काल में हमारा देश ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में संसार के किसी भी दूसरे सभ्य देश से पीछे नहीं था। मध्ययुग में अरब देशों ने और यूरोप के देशों ने भारतीय विज्ञान की बहुत-सी बातें सीखीं। लेकिन यदि पूछा जाय कि विज्ञान के क्षेत्र में संसार को भारत की सबसे बड़ी देन कौन-सी है, तो उत्तर होगा —— आज की हमारी अंक-पद्धति!

आज की हमारी अंक-पद्धति में केवल दस संकेत हैं —— शून्य और नौ अंक-संकेत। इन दस अंक-संकेतों से हम बड़ी-से-बड़ी संख्या लिख सकते हैं। इन दस अंक-संकेतों के अपने स्वतंत्र मान हैं। इसके अलावा, हर अंक-संकेत का, संख्या में उसके स्थान के अनुसार, मान बदलता है। स्थानमान और शून्य की यह धारणा ही इस अंक-पद्धति की विशेषता है।

हमें गर्व है कि इस वैज्ञानिक अंक-पद्धति की खोज भारत में हुई है। सारे संसार में आज इसी भारतीय अंक-पद्धति का इस्तेमाल होता है।

लेकिन यह अंक-पद्धति मुश्किल से दो हजार साल पुरानी है। उसके पहले हमारे देश में और संसार के अन्य देशों में भिन्न-भिन्न अंक-पद्धतियों का इस्तेमाल होता था। आज की इस वैज्ञानिक अंक-पद्धति के महत्त्व को समझाने के लिए उन पुरानी अंक-पद्धतियों के बारे में भी जानना जरूरी है। इस पुस्तक में मैंने देश-विदेश की पुरानी

अंक-पद्धतियों की जानकारी दी है। तदनंतर, इस शून्यवाली नई अंक-पद्धति के आविष्कार की जानकारी। यह भारतीय अंक-पद्धति पहले अरब देशों में और बाद में यूरोप के देशों में कैसे फैली, इसका भी रोचक वर्णन इस पुस्तक में है।

जहां तक मेरी जानकारी है, भारतीय भाषाओं में यह अपने तरह की पहली पुस्तक है। आशा है, विद्यार्थी एवं सामान्य पाठक इसे उपयोगी पायेंगे।

पुस्तक के इतने साफ़-सुथरे प्रकाशन का श्रेय प्रकाशक व मुद्रक को है। ओरिएंट लौंगमन के प्रकाशन-परामर्शदाता **श्री. मोहन राव** के सुझाव व स्नेह के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूं। वे इस पुस्तक को अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी प्रकाशित देखना चाहते हैं।

मेरी सहधर्मिणी **शांति** प्रूफ देखने में मुझ से अधिक निपुण है। विश्वास है, मेरे लेखन-धर्म में उनका सहयोग सदैव मिलता रहेगा।

नई दिल्ली—८
११ सितम्बर १६७१

गुणाकर मुळे

विषय-सूची

१. अंकों की शक्ति ९
२. गणना का आरंभ १२
३. प्राचीन मिस्र के अंक १५
४. सुमेरी-बेबीलोनी अंक-पद्धति १८
५. चीन की अंक-पद्धति २१
६. मय सभ्यता की अंक-पद्धति २४
७. यूनानी अंक-पद्धति २७
८. रोमन अंक-पद्धति ३१
९. भारतीय अंक-पद्धतियां ३४
१०. सिन्धु सभ्यता के अंक ३६
११. वैदिक अंक-पद्धति ३९
१२. अशोक की ब्राह्मी लिपि के अंक ४२
१३. खरोष्ठी अंक ४५

१४. बड़ी-बड़ी संख्याएं ४७
१५. शून्य का आविष्कार ५२
१६. अक्षरांक ५६
१७. शब्दांक ५९
१८. अरब देशों में भारतीय अंक ६१
१९. यूरोप में भारतीय अंक ६४
२०. उपसंहार ६८

अंकों की शक्ति

केवल दस चिह्न; केवल दस संकत...

१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, ०.

यही हैं दस अंक-संकेत। हम अपनी लिपि में इन्हें इस तरह लिखते हैं। दूसरी लिपियों में और दूसरे देशों में इन्हें कुछ दूसरी तरह लिखा जाता है। लेकिन सारी दुनिया में अब अंकों की संख्या दस ही है।

इन्हीं अंक-संकेतों से संख्याएं बनती हैं। संख्या चाहे कितनी भी बड़ी क्यों न हो, उसे इन दस अंकों से लिखा जा सकता है। दूसरी ओर, संसार की प्रायः हर वस्तु को संख्या में लिखा जा सकता है। लगता है कि हमारा यह विश्व सचमुच ही संख्यामय है!

पग-पग पर हमें अंकों की जरूरत पड़ती है। गणित में अंकों की जरूरत पड़ती है; हिसाब-किताब में, माप-तौल में, यहां तक कि जीवन के हर व्यापार में संख्याओं की जरूरत पड़ती है। और संख्याएं इन्हीं दस अंकों में लिखी जाती हैं।

आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि आदमी यदि इन दस अंकों का और इनसे बनी हुई संख्याओं का इस्तेमाल करना छोड़ दे तो दुनिया का क्या हाल होगा!

हमारे मन में सवाल उठते हैं: कब से इन अंकों को हम जानते हैं? किसने इनकी खोज की? किस देश में पहली बार इनकी खोज हुई?

वास्तव में, इन अंकों के चिह्न उतने महत्त्व के नहीं हैं। इनकी जगह पर किन्हीं भी दस

चिह्नों को लिया जा सकता है। महत्त्व की बात है इनकी संख्या दस, और केवल दस, होना।

महत्त्व की बात है इन दस चिह्नों में एक चिह्न शून्य का होना। यदि इन दस चिह्नों में शून्य का चिह्न न हो तो फिर शेष नौ चिह्न महत्त्व के नहीं रह जाते। शून्य का अर्थ है, कुछ नहीं! पर यह शून्य का संकेत न होता तो हम केवल इन दस चिह्नों से बड़ी-बड़ी संख्याओं को लिख ही नहीं सकते थे। इन दस संकेतों में से प्रत्येक का अपना एक स्वतन्त्र अर्थ है। इसके अलावा, ये संकेत संख्या में जो स्थान ग्रहण करते हैं, उसके अनुसार भी इनका अर्थ बदलता रहता है।

जैसे, १ का अर्थ है केवल एक। पर इसी १ का संख्या १२ में अर्थ होगा दस। संख्या १२३४५ में इसी १ का अर्थ होगा दस हजार! इस प्रकार हम देखते हैं कि संख्या में कोई भी अंक एक स्थान पीछे या एक स्थान आगे जाता है तो उसका मान दस गुना बढ़ जाता है या दस गुना घट जाता है।

अंकों के चिह्नों से गिनती करने की जो योजना बनती है उसे हम **अंक-पद्धति** कहते हैं। दस अंकों की सहायता से जो अंक-पद्धति बनती है उसे हम **दाशमिक अंक-पद्धति** कहते हैं। संख्या में अंकों के स्थान के अनुसार उनका मान घटता-बढ़ता रहता है, इसलिए ऐसी अंक-पद्धति को हम **दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति** कहते हैं। आज संसार के सारे सभ्य देशों में इसी स्थानमान युक्त दाशमिक अंक-पद्धति का इस्तेमाल होता है।

इस अंक-पद्धति का आविष्कार हमारे देश में हुआ। शून्य का आविष्कार हमारे देश में हुआ। हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि विज्ञान के क्षेत्र में संसार को भारत की यह सबसे बड़ी देन है।

हम जानते हैं कि शून्य वाली इस अंक-पद्धति का आविष्कार कब हुआ। इसका आविष्कार हुए दो हजार साल भी नहीं हुए हैं। लेकिन उसके पहले भी हमारे देश में गिनतियां होती थीं, अंकों के चिह्न थे, संख्याएं लिखी जाती थीं। पर उन्हें लिखने में या उनकी सहायता से गणना करने में बड़ी कठिनाइयां थीं।

दूसरे देशों में भी अलग-अलग अंक-पद्धतियां थीं। अलग-अगल देश, अलग-अलग लिपियां, अलग-अलग अंक-पद्धतियां। पर भारत की इस वैज्ञानिक अंक-पद्धति के सामने कोई भी अंक-पद्धति नहीं टिक पाई। आज सारे संसार में भारतीय अंक-पद्धति का ही इस्तेमाल होता है। इतना ही नहीं, बहुतों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि अंग्रेजी के साथ जो अंक लिखे जाते हैं, उनका विकास हमारे देश के ब्राह्मी अंक-संकेतों से हुआ है। उन्हें

'अंग्रेजी अंक' या 'अरबी अंक' कहना ठीक नहीं है। इसीलिए आज हम उन्हें 'भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय अंक' कहते हैं।

अब हमें देखना है कि गिनती की शुरुआत कब हुई, अंकों का जन्म कब हुआ। शून्य का आविष्कार होने के पहले हमारे और अन्य देशों में अंक कैसे लिखे जाते थे, शून्य का आविष्कार कब हुआ, भारतीय अंक-पद्धति का दूसरे देशों में किस प्रकार प्रचार हुआ, इत्यादि।

आओ, शुरू से ही खोजबीन करें...।

गणना का आरंभ

वैज्ञानिकों ने कुछ पशुओं और पक्षियों की गणना-शक्ति के बारे में प्रयोग किए हैं। पता चला है कि कुछ पशु और पक्षी १ या २ और २ या ३ वस्तुओं के भेद को समझते हैं।

तीन-चार लाख साल पहले के मानव ने पत्थर के हथियार बनाना शुरू कर दिया था। उसके पास एक पत्थर का हथियार है, या दो हथियार हैं या पांच हथियार हैं, इस बात को वह जरूर समझता होगा। वह इस बात को भी समझता होगा कि उसने एक दिन में एक जानवर का शिकार किया या दो जानवरों का।

उस जमाने के आदमी के हाथ में भी पांच उंगलियां होती थीं। दोनों हाथों की दस उंगलियां होती थीं। हाथ की इन उंगलियों के साथ वस्तुओं का संबन्ध जोड़-जोड़कर वह ५ या १० तक की गिनती जरूर कर लेता होगा। हमारे आज के कुछ शब्दों पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

अंग्रेजी में एक शब्द है 'डिजिट', जिसका अर्थ होता है अंक। यह शब्द लातिन भाषा के 'डिजिटुस्' शब्द से बना है और इसका मूल अर्थ है उंगली। यूनानी भाषा का 'पेन्ते' और जर्मन भाषा का 'फीम्फ' शब्द आज ५ के लिए इस्तेमाल होता है, पर इनका पुराना अर्थ है 'हाथ का पंजा'। हाथ के पंजे में पांच उंगलियां होती हैं, इसीलिए 'पंजा' शब्द संख्या ५ का द्योतक बन गया। इसी प्रकार हम देखते हैं कि बहुत-सी बोलियों में 'आंखें' शब्द का अर्थ संख्या 'दो' भी होता है!

आज भी ऐसी अनेक आदिम-जातियां हैं जिनकी बोलियों में पांच से अधिक के लिए

शब्द नहीं मिलते । कई तो ऐसी भी आदिम-जातियां हैं जिनकी बोलियों में गिनती के लिए केवल 'एक' ' दो ' और 'अनेक' अर्थ वाले ही शब्द मिलते हैं । तस्मानिया के आदिवासियों की बोली में गिनती के लिए केवल तीन शब्द थे —– पारमेरी (एक), कालाबावा (दो) और कार्दिया (बहुत) । न्यूहालेंड के आदिवासियों की बोली में तीन और चार के लिए स्वतन्त्र शब्द नहीं थे । वे तीन को ' दो–एक ' और चार को ' दो–दो ' कहते थे । अंदमान द्वीप के आदिवासी केवल दो शब्दों से १० तक की गनती करते हैं––उबातुल (एक) और इक्पोर (दो) । हमारे देश की कई आदिम-जातियों की गिनती का भी यही हाल है ।

हमारी भाषाओं के माता, पिता आदि कुछ शब्द बहुत प्राचीन हैं। उसी प्रकार, हमारी भाषाओं के एक से पांच तक की संख्याओं के शब्द भी बहुत पुराने हैं। संस्कृत, यूनानी, लातिन आदि प्राचीन भाषाओं में एक से दस तक की संख्याओं के लिए लगभग एक जैसे शब्द मिलते हैं । इससे यह भी पता चलता है कि प्राचीन काल में इन भाषाओं को बोलने वाले लोग एक स्थान पर रहते थे । कभी-कभी पुराने लेखों में पाए गए संख्या-शब्द प्राचीन इतिहास पर नया प्रकाश डालते हैं । आज से लगभग साढ़े तीन हजार साल पहले के, कीलाक्षर लिपि में लिखे हुए, पश्चिम-एशिया से कुछ लेख मिले हैं। इनमें इन्द्र, वरुण, मित्र आदि देवताओं के नाम मिलते हैं । घोड़ों को सिखाने के बारे में एक पुस्तक भी मिलती है। इस पुस्तक में ' एक घुमाव ', ' दो घुमाव ' 'सात घुमाव' आदि के लिए हमारी संस्कृत भाषा जैसे शब्द मिलते हैं ।

इन शब्दों को देखने से ही पुराविदों ने जाना है कि किसी समय आर्य-परिवार की भाषा बोलने वाले लोग पश्चिम-एशिया में शासन करते थे । तात्पर्य यह कि, संख्यावाची शब्द बहुत पुराने हैं और इनसे लोगों के पुराने संबन्ध जानने में मदद मिलती है ।

पुरानी भाषाओं के व्याकरण का और आदिम समाज के गिनती के तरीके का भी गहरा संबन्ध है । हम देख चुके हैं कि आदिम समाजों में गिनती के लिए प्रायः केवल तीन शब्दों का ही इस्तेमाल होता रहा है ––एक, दो और अनेक । दूसरी ओर, हम जानते हैं कि मिस्री, अरबी, हिब्रू, संस्कृत, यूनानी आदि प्राचीन भाषाओं में तीन वचनों का प्रयोग होता था– एकवचन, द्विवचन और बहुवचन । प्राचीन भाषाओं में ये तीन वचन होने का स्पष्ट कारण यह है कि पुराने जमाने के लोग गिनती में केवल तीन शब्दों का ही व्यवहार करते थे––'एक', 'दो' और 'बहुत' । उदाहरण के लिए, मिस्र की प्राचीन हाइरोग्लिफिक लिपि में एक वस्तु के लिए एक खड़ी लकीर खींची जाती थी, दो वस्तुओं के लिए दो लकीरें (।।) और दो से अधिक

वस्तुओं के लिए तीन लकीरें (।।।) !

लिपि के अक्षरों का आविष्कार करने के बहुत पहले आदमी ने अंकों के चिह्नों का आविष्कार कर लिया था । प्रायः हर प्राचीन सभ्यता में हम गिनती के लिए खड़ी या आड़ी लकीरें देखते हैं । जितनी वस्तुएं उतनी लकीरें । यही थे सबसे पुराने अंक-संकेत । आज के आदिवासी और सभ्य समाजों के हमारे बच्चे भी इन्हीं लकीरों का इस्तेमाल करते देखे जाते हैं –– जितनी वस्तुएं उतनी लकीरें !

लेकिन धीरे-धीरे संख्या-संकेतों का विकास होता गया । बड़ी-बड़ी संख्याओं के छोटे और स्वतन्त्र चिह्न भी बनने लगे । आओ, हम देखें कि पुराने जमाने में किस देश में किस प्रकार के अंक लिखे जाते थे...

प्राचीन मिस्र के अंक

हमारी आज की अंक-पद्धति को जन्म लिए मुश्किल से दो हजार साल हुए हैं। केवल कुछ शताब्दियां पहले ही यूरोप के देशों में इसका प्रचार हुआ है।

हमारी इस अंक-पद्धति के पहले हमारे और दूसरे देशों में अंक लिखे जाते थे, गणनाएं होती थीं। पुराने जमाने के अंक कैसे थे, कैसे लिखे जाते थे, उनको लिखने में क्या-क्या कठिनाइयां थीं, आदि बातों को जानना बड़ा जरूरी है। तभी हम आज के हमारे अंकों की विशेषता को समझ सकते हैं। साथ ही, हमें यह भी जानकारी मिलती है कि धीरे-धीरे आदमी की बुद्धि ने किस प्रकार विकास किया।

हमारे देश के कुछ लोग प्रचार करते रहते हैं कि पुराने जमाने में हमारा देश ज्ञान-विज्ञान में संसार के सारे देशों से आगे था। हमारे ऋषि-मुनि सभी कुछ जानते थे। वेदों में दुनिया का सारा ज्ञान भरा हुआ है; इत्यादि।

परन्तु ये बातें सही नहीं हैं। वेदों की रचना होने के कम से कम हजार साल पहले मिस्र और मेसोपोटामिया में बहुत सारा साहित्य लिखा गया था; गणित की पुस्तकें भी लिखी गई थीं। आज भले ही हमें उनका गणित पिछड़ा हुआ लगता हो, पर हमें यह जरूर ध्यान में रखना चाहिए कि आज से लगभग पांच हजार साल पहले उन्होंने अंक-पद्धतियों को जन्म दिया था और गणित पर उन्होंने पुस्तकें भी लिखी थीं।

आज से पांच हजार साल पहले मिस्र के इतिहास का आरम्भ होता है। उस समय मिस्र में लिपि और अंक जन्म ले चुके थे। बड़ी-बड़ी संख्याओं को लिखने के लिए भी अंक-

संकेत थे। जैसे, ईसा से ३००० साल पहले से एक राजा का लेख मिलता है, जिसमें ४००००० बैलों को, १४२२००० बकरों को और १२०००० आदमियों को अंक-संकेतों से दरशाया गया है। मिस्र की प्राचीन हाइरोग्लिफिक लिपि में संख्याओं को लिखने में इन अंक-संकेतों का इस्तेमाल होता था :

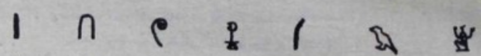

१   १०   १००   १०००   १०,०००   १००,०००   १०००,०००

प्राचीन मिस्र के अंक-संकेत

१ से ९ तक की संख्याएं खड़ी लकीरों से लिखी जाती थीं; जैसे, ९ = |||||||||; १० के लिए एक स्वतन्त्र संकेत था। इसी प्रकार, १००, १०००, १०००० और १०,००,०० के लिए भी स्वतन्त्र चिह्न थे। हम देखते हैं कि हजार के लिए कमलनाल का चित्र है; दस हजार के लिए अंगुली का चित्र है और एक लाख के लिए एक पक्षी (अबाबील) का चित्र है। दस लाख के लिए दोनों हाथ ऊपर उठाए एक बैठे हुए आदमी का चित्र है — मानो वह कह रहा हो कि यही सबसे बड़ी संख्या है।

प्राचीन मिस्र के गणितज्ञों को शून्य का ज्ञान नहीं था। इसलिए उनकी अंक-पद्धति में स्थानमान के लिए भी कोई स्थान नहीं था। संख्याओं को लिखने के लिए उन्हें बहुत सारे संकेतों का इस्तेमाल करना पड़ता था। एक उदाहरण —

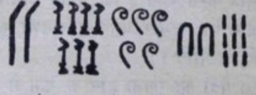

२०००० + ७००० + ५०० + २० + ९ = २७५२९.

यहां हम देखते हैं कि संख्या २७५२९ को लिखने में जहां हमें केवल पांच संकेतों का इस्तेमाल करना पड़ता है, वहां मिस्र के गणितज्ञों को कुल २५ संकेतों का इस्तेमाल करना पड़ता था।

संख्याओं को लिखने में इतनी कठिनाई होने पर भी आज से चार हजार साल पहले मिस्र का गणित काफी प्रगति कर चुका था। उस जमाने की पेपीरस कागज पर लिखी हुई

गणित की कई पुस्तकें मिली हैं । प्राचीन मिस्र के अंकगणित का मूल परिकर्म था, जोड़ना । दो संख्याओं का गुणन या भाग वे जोड़ने की क्रिया से ही पूरा करते थे । उदाहरण के लिए, १२ × १२ का हल वे इस प्रकार प्राप्त करते थे :

१	१२
२	२४
✓ ४	४८
✓ ८	९६
	१४४

यहां बायीं ओर के स्तम्भ की ४ और ८ संख्याओं को मिलाने से संख्या १२ मिलती है । इन दो संख्याओं के सामने की दायीं ओर की संख्याओं को मिलाने से १२ × १२ का सही उत्तर मिलता है, १४४ । भाग की क्रिया के लिए भी वे इसी लम्बे तरीके का इस्तेमाल करते थे ।

अंक-पद्धति इतनी कठिन होने पर भी मिस्र के गणितज्ञ गणित में बहुत उन्नति कर चुके थे । सामान्य अंकगणित के सारे परिकर्म वे जानते थे । बीजगणित के समीकरणों को भी वे हल करना जानते थे । ज्यामिति में तो वे बहुत ही उन्नति कर चुके थे । शुरू-शुरू में यूनान के थेल, पाइथेगोर आदि गणितज्ञों ने मिस्र की ज्यामिति के बारे में बहुत-सी बातें जानी थीं ।

मिस्र की नील नदी में हर साल बाढ़ आती है । बाढ़ के उतर जाने पर खेतों को पुन: मापकर उनका बंटवारा करना पड़ता था । इसलिए खेतों के मापने के तरीके को वे अच्छी तरह जानते थे । इसीलिए प्राचीन मिस्र में क्षेत्र-मापन या सर्वेक्षण का विकास हुआ था । इसके साथ-साथ ज्यामिति का भी विकास हुआ । इसीलिए यूनानियों को मिस्र से ज्यामिति के बारे में नई बातें जानने को मिली थीं ।

पर यूनानियों ने मिस्र की अंक-पद्धति को नहीं अपनाया; क्योंकि उनकी अपनी स्वतन्त्र अंक-पद्धति थी । प्राचीन मिस्र की यह अंक-पद्धति लगभग तीन हजार साल तक जीवित रही । उसके बाद प्राचीन मिस्र की सभ्यता के विनाश के साथ-साथ इस अंक-पद्धति का भी विनाश हुआ ।

सुमेरी-बेबीलोनी अंक-पद्धति

पश्चिम एशिया के इराक देश से बहती हुई दजला और फरात नदियां फारस की खाड़ी में गिरती हैं । आज से लगभग पांच हजार साल पहले इन नदियों के मुहाने के पास सूमेरी लोगों की बस्तियां थीं । सुमेरी लोगों ने लिपि का आविष्कार किया था । वे मिट्टी के फलकों पर लिखते थे ।

सुमेरी लोगों के उत्तर में अक्कदी लोग रहते थे । बाद में इन अक्कदी लोगों ने सुमेरियों की भूमि पर अधिकार जमा लिया था । अक्कदियों ने सुमेरियों की कई बातों को अपना लिया था । उन्होंने अपनी भाषा के लिए सुमेरी लिपि को अपनाया, सुमेरी अंकों को अपनाया । बेबीलोन नगरी अक्कदियों की राजधानी थी, इसलिए अक्कदियों को बेबीलोनी भी कहते हैं ।

इराक के पुराने नगरों की खुदाई हुई तो वहां से लिखे हुए हजारों फलक मिले हैं । सूखी मिट्टी के होने के कारण ही ये जमीन के भीतर भी हजारों साल तक टिके रहे । दरअसल, बेबीलोनी राजाओं के पुराने पुस्तकालय ही पुराविदों ने खोज निकाले हैं । इनमें हिसाब-किताब और गणित के बारे में भी पुस्तकें (फलक) मिली हैं । इन्हीं का अध्ययन करने से सुमेरी और बेबीलोनी अंक-पद्धति और गणित के बारे में हमें जानकारी मिली है ।

हमारी गणना का आधार दस है; अर्थात् दस-दस के क्रम से गिनती होती है । प्राय: सभी प्राचीन सभ्यताओं में गणना का आधार दस ही रहा है । हमने देखा है कि मिस्र में भी गणना का आधार दस ही था । पर यहां सुमेर-बेबीलोन में हम दूसरी ही स्थिति देखते हैं ।

शुरू में सुमर में भी गणना का आधार दस ही रहा होगा, पर बाद में हम देखते हैं कि वहां गणना का आधार ६० बन गया था। दरअसल, सुमेर-बाबीलोन के लोग १० और ६० इन दोनों ही आधारों का इस्तेमाल करते देखे जाते हैं।

सो कैसे ?

एक से नौ तक की संख्याओं को वे इतनी ही खड़ी लकीरों से लिखते थे; इस प्रकार :

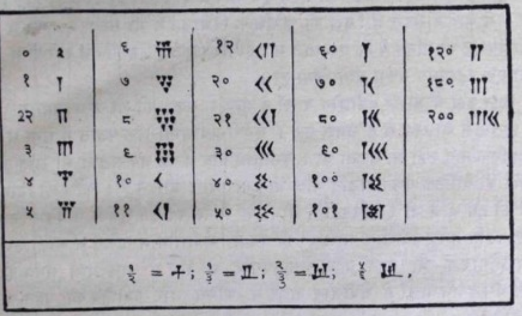

बेबीलोनी अंक-संकेत

१० के लिए एक स्वतन्त्र संकेत था। २०, ३० आदि संख्याएं इसी संकेत को दोहराकर लिखी जाती थीं। ५९ तक की संख्याएं खड़ी लकीरों और १० के चिह्नों की मदद से लिखी जाती थीं।

परन्तु ६० के लिए पुनः १ के संकेत का इस्तेमाल किया जाता था। इसी एक संकेत का इस्तेमाल ६०×६०, ६० × ६० × ६० के लिए यानी ६० के किसी भी घात के लिए भी होता था। इसी प्रकार १० के चिह्न का इस्तेमाल, न केवल १० के लिए, बल्कि १०×६०, १०×६०^{२}, १०×६०^{३} इत्यादि के लिए भी होता था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज से चार-पांच हजार साल पहले सुमेर-बेबीलोन में दाशमिक और षाष्ठिक अंक-पद्धतियों के मेलजोल का इस्तेमाल होता था। दाशमिक

अंक-पद्धति के इस्तेमाल की बात तो समझ में आ जाती है, क्योंकि हमारे हाथ की उंगलियां दस हैं और इन्हीं उंगलियों से गिनती की शुरूआत हुई है। पर सुमेर वालों ने यह ६० का आधार क्यों पसंद किया, इसे आज हम नहीं जान सकते।

गणना का आधार १० की बजाय कोई भी अन्य संख्या ली जा सकती है। यदि गहराई से देखा जाए तो १० की बजाय १२ या १६ या ६० के आधार बेहतर ही हैं। १० को हम केवल २ और ५ से ही पूर्ण भाग दे सकते हैं, परन्तु ६० को हम २, ३, ४, ५, ६, १०, १२, १५, २० और ३० से भाग दे सकते हैं ! वृत्त की परिधि के विभाजन में भी संख्या ६० महत्त्व की है। सुमेरी लोग यह भी मानते थे कि एक साल में ३६० दिन होते हैं। इन्हीं सब कारणों से उन्होंने ६० को एक रहस्यमय संख्या मान लिया हो।

बहुत बाद में जाकर बेबीलोन वालों ने शून्य के संकेत को भी जन्म दिया था; पर वे उसके इस्तेमाल को ठीक से न समझ सके। सुमेरी-बेबीलोनी अंक-पद्धति में शून्य न होने से इसे वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता था। इसीलिए बाद में यह अंक-पद्धति भी लुप्त हो गई। पर सुमेर की षाष्ठिक गणना-पद्धति आज भी हमारे बीच जीवित है। कोण की डिग्रियों को या घंटे को हम आज भी ६० मिनटों में और एक मिनट को ६० सेकंडों में विभाजित करते हैं। यह पद्धति सुमेर-बेबीलोन वालों की ही देन है। बेबीलोन में गणित ने काफी उन्नति की थी। पाइथेगोर के भी बहुत पहले वे पाइथेगोर के नाम से जाने वाले प्रमेय की खोज कर चुके थे। यूनान वालों ने बेबीलोन वालों से गणित और ज्योतिष की बहुत-सी बातें सीखी थीं।

चीन की अंक-पद्धति

चीन की सभ्यता लगभग उतनी ही प्राचीन है जितनी कि भारत, मेसोपोटामिया और मिस्र की सभ्यताएं। आज से लगभग चार हजार वर्ष पहले चीनी लोग लिपि का आविष्कार कर चुके थे और अंकों की खोज तो वे इसके भी बहुत पहले कर चुके थे।

चीनी भाषा मुख्यत: एकाक्षरी है। एक से १० तक के अंक और सौ, हजार तथा दस-हजार के लिए भी चीनी में एकाक्षरी शब्द हैं। यही कारण है कि चीनी लिपि की तरह चीनी अंकों के लिए भी बहुत प्राचीन काल में स्वतन्त्र संकेत अस्तित्व में आए थे और आज भी उन्हीं संकेतों का इस्तेमाल होता है।

一 二 三 四 五

六 七 八 九 十

चीनी अंक-संकेत

संख्याएं ऊपर से नीचे या बायीं ओर से दायीं ओर को लिखी जाती हैं। उदाहरण के लिए —

六百七十八 = ६७८

यहां संख्या ६७८ को लिखने के लिए पांच संकेतों का इस्तेमाल हुआ है। ये संकेत बायीं ओर से क्रमश: ६, १००, ७, १० और ८ के हैं। इस चीनी अंक-पद्धति में शून्य की व्यवस्था न होने के कारण ही उन्हें यहां ६ और ७ के आगे क्रमश: सैकड़ा और दहाई के संकेत लिखने पड़े हैं। जाहिर है कि इस अंक-पद्धति में अंकों की संख्या बढ़ जाती है और इनसे गणनाओं में असुविधा होती है।

चीनियों ने एक दूसरी दंड अंक-पद्धति को भी जन्म दिया था। रोमन लोग कंकड़ों से गणना करते थे, तो प्राचीन काल में चीनी लोग दंडों की सहायता से गणना करते थे। इसीलिए आज से दो हजार साल पहले वहां दंड-अंक अस्तित्व में आए थे। इन दंड अंकों को इस प्रकार लिखा जाता था :

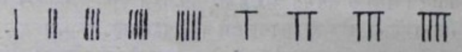

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९

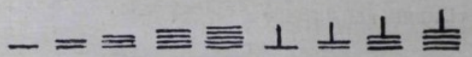

१० २० ३० ४० ५० ६० ७० ८० ९०

चीनी दंड-अंक

इसके बाद १००, २०० आदि सैकड़ों की संख्याएं पुन: इकाई के अंकों से लिखी जाती थीं और १०००, २००० आदि संख्याएं दहाई के अंकों से। और यह सिलसिला आगे भी इसी तरह चलता रहता था। इस दंड अंक-पद्धति में स्थानमान का इस्तेमाल होता था और आगे जाकर चीनी लोग शून्य के संकेत का भी इस्तेमाल करने लग गये थे। दंड-अंकों के कुछ उदाहरण :

१. 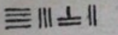 = ४३७२

२. तेरहवीं सदी की गणित की एक पुस्तक में १४७,००,००–६४४,६४ = १४०५५३६ को इस प्रकार लिखा गया है :

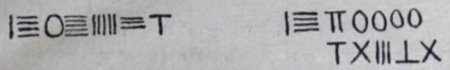

इस उदाहरण में घटाई जाने वाली संख्या दायीं ओर नीचे है और शेष को बायीं ओर लिखा गया है। यहां शून्य के लिए गोलाकार चिह्न है और ४ के लिए |||| के अलावा × चिह्न का भी इस्तेमाल हुआ है।

चीन में एबैकस से गणना करने का रिवाज बहुत पुराना है। आज भी वहां कार्यालयों, बैंकों, स्कूलों आदि में एबैकस का बहुत इस्तेमाल होता है। चीनी लोग एबैकस की सहायता से गणना करने में बड़े कुशल होते हैं।

मय सभ्यता की अंक-पद्धति

अमरीका का नया इतिहास मुश्किल से पांच सौ साल पुराना है। कोलम्बस ने जब नई तरह से अमरीका की खोज की, तो बड़ी संख्या में यूरोप के लोग अमरीका में जाकर बसने लग गए थे। आज इन्हीं लोगों का अमरीका के देशों में प्रभुत्व है।

परन्तु इसके पहले भी अमरीका में लोग बसते थे और वे स्वतन्त्र रूप से एक सभ्यता को जन्म दे चुके थे। कुछ मानों में ये लोग काफ़ी पिछड़े हुए थे। जैसे, ये लोहे के हथियार और गाड़ी के पहिए से परिचित नहीं थे। पर दूसरी ओर ये बहुत विकास कर चुके थे। पिरामिडों जैसे मंदिर बनाते थे, बहुत पहले लिपि की खोज कर चुके थे और कागज बनाना भी जानते थे। लेकिन इन्होंने सबसे अधिक उन्नति की थी काल-गणना और अंक-गणना में। मध्य अमरीका के मय लोगों का पंचांग यूरोप के ग्रेगोरी पंचांग से बेहतर था और मय लोगों की अंक-पद्धति भी रोमन अंक-पद्धति से बेहतर थी। मय लोगों का इतिहास दो-तीन हजार साल पुराना है।

सोलहवीं सदी के स्पेनिश साम्राज्यवादियों ने मय लोगों के पुराने अवशेषों को बुरी तरह नष्ट किया है। खोज-खोजकर मय पुस्तकों को जमा किया गया और उनमें आग लगा दी गई। मुश्किल से तीन पुस्तकें बच पायी हैं। इन्हीं पुस्तकों के अध्ययन से पुनः मय लिपि और अंक-पद्धति की खोज हुई है। मय लोगों की अंक-पद्धति की खोज कुछ पहले हुई है, पर उनकी लिपि का उद्घाटन अभी कुछ साल पहले सोवियत वैज्ञानिकों ने किया है।

हमने देखा है कि प्रायः सभी पुरानी सभ्यताओं की अंक-पद्धति दस पर आधारित है। सुमेरी अंक-पद्धति का आधार ६० था। लेकिन मय अंक-पद्धति २० पर आधारित थी।

इसका कारण ?

हमारे दोनों हाथों की उंगलियां दस हैं, इसीलिए प्राचीन काल में दस के आधार वाली गणना ने जन्म लिया था। लेकिन हमारे दो पैर भी हैं। दो हाथ और दो पैरों की कुल २० उंगलियां होती हैं। यही कारण है कि मय लोगों ने बीस पर आधारित अंक-पद्धति को जन्म दिया था। १९ तक की संख्याओं को वे केवल दो संकेतों की सहायता से लिखते थे। ये दो संकेत थे —— आड़ी लकीर और बिंदु। १ के लिए एक बिंदु और ५ के लिए एक आड़ी लकीर का इस्तेमाल होता था। इस प्रकार आड़ी लकीरों के ऊपर बिंदुओं को रखते हुए वे १६ तक की संख्याएं लिखते थे। वे शून्य का आविष्कार कर चुके थे और इसके लिए कौड़ी की शकल के एक चिह्न का इस्तेमाल करते थे। इस चिह्न के ऊपर एक बिंदु रख देने पर यह २० का चिह्न बन जाता था। इस प्रकार मय सभ्यता के १ से २० तक के अंक थे :

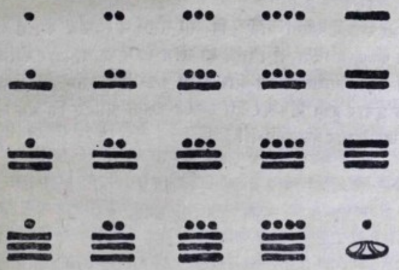

मय अंक-पद्धति के अनुसार १ से २० तक की संख्याएं

बस, केवल इन्हीं संकेतों–शून्य, बिंदु और आड़ी लकीर —— से वे सारी संख्याएं लिख सकते थे। जैसे, कौड़ी के ऊपर एक बिंदु हुआ तो यह २० की संख्या हुई। कौड़ी के ऊपर तीन आड़ी लकीरें हुई तो यह १५ × २० = ३०० संख्या हुई। इस संख्या के ऊपर और दो

बिंदु हुए तो यह १७×२० = ३४० संख्या हुई। इस प्रकार मय लोग बड़ी से बड़ी संख्या लिखने में समर्थ थे; उदाहरण के लिए ——

(८००० × ३) = २४०००

(४०० × १६) = ६४००

(२० × २०) = ४००

१४ = १४

३०८१४

हमारी वर्तमान अंक-पद्धति की तुलना में मय अंक-पद्धति भले ही कुछ घटिया दर्जे की लगती हो, पर यूरोप की यूनानी और रोमन अंक-पद्धतियों से वह बेहतर थी, इसे यूरोप के विद्वान भी स्वीकार करते हैं।

हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि मय लोगों ने स्वतन्त्र रूप से शून्य-संकेत और शून्य की धारणा को जन्म दिया था। शून्य की खोज करने का दावेदार केवल भारत ही नहीं है। हमारी अंक-पद्धति दाशमिक थी और इसमें कुछ विशेषताएं थीं, इसलिए आज सारे संसार में इसका प्रचार हुआ है। पर हमें स्मरण रखना चाहिए कि मय लोग भी स्वतन्त्र रूप से शून्य का आविष्कार कर चुके थे !

यूनानी अंक-पद्धति

अंकों के इतिहास में यूनानी अंक-पद्धति का विशेष महत्त्व है। अभी तीन सौ साल पहले यूरोप के देशों में अधिकतर यूनानी और रोमन अंकों का ही इस्तेमाल होता था। पाइथेगोर, यूक्लिद, आर्किमिदीज, एपोलोनियस, डायोफैन्टस आदि महान यूनानी गणितज्ञों ने इसी अंक-पद्धति का उपयोग किया था।

यूनानी लोगों का इतिहास लगभग १५०० ई. पू. से शुरू होता है। जब ये यूनान में आए तो इनके पास अपनी कोई लिपि नहीं थी। इनकी एक शाखा भूमध्यसागर के क्रीट द्वीप में पहुंची थी। यूनानियों ने सबसे पहले क्रीट वालों की पुरानी लिपि के आधार पर अपनी भाषा के लिए एक लिपि बना ली थी। पुराविदों ने इस लिपि को **रैखिक-ब** लिपि का नाम दिया है। अभी कुछ साल पहले ही इस लिपि को पढ़ा गया है। अंक-संकेत भी जाने गए हैं।

मिस्र की अंक-पद्धति की तरह यह अंक-पद्धति भी दाशमिक है और इसमें शून्य नहीं है। १ से ९ तक के अंक खड़ी लकीरों से लिखे गए हैं। दहाइयों के लिए आड़ी लकीरों का इस्तेमाल हुआ है। छोटे वृत्त का चिह्न सौ को बतलाता है और किरणों वाला वृत्त हजार को। इस किरणों वाले वृत्त के भीतर एक आड़ी लकीर हो तो दस हजार का चिह्न बन जाता है। एक उदाहरण :

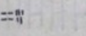 = १२३४५

ईसा के करीब एक हजार साल पहले यूनानियों ने क्रीट की इस लिपि को छोड़कर अपने लिए एक नई वर्णमालात्मक लिपि का निर्माण कर लिया था। यूनानी लिपि पश्चिम एशिया की फोनिशियन लिपि के आधार पर बनी है। न केवल संकेत बल्कि इन संकेतों के नाम भी यूनानियों ने उन्हीं से लिए थे।

यूनान में ईसा से तीन सौ साल पहले, यानी लगभग अशोक के समय में, हम एक नई अंक-पद्धति को देखते हैं। संख्याओं के नाम होते हैं। इन संख्या-नामों के पहले अक्षर को लेकर यूनानी लोग उसी से उस संख्या को लिखने लगे। जैसे,

T : यह अक्षर Π का प्राचीन रूप है। यह यूनानी शब्द 'पेन्ते' (पांच) का पहला अक्षर है, इसलिए यह ५ का अंक बना।

Δ : यह अक्षर 'डेका' (दस) का पहला अक्षर है, इसलिए १० के लिए इस्तेमाल होने लगा।

इसी प्रकार —

H : १०० (हेकाटोन)

X : १००० (चिलिओन या खिलिओन)

M : १०००० (माइरिओइ)

१ से ४ तक के अंकों को खड़ी लकीरों से लिखा जाता था। नीचे के उदाहरणों को देखने से पता चल जाएगा कि इनसे संख्याएं किस प्रकार लिखी जाती थीं :

ΓII = ७

ΔΓIIII = १९

𐅄 या 𐅄 = ५०

𐅄ΔΔΔΔIIII = ९९

𐅅 = ५००

𐅅HH = ७००

MMMM = ४००००

𐅇 = ५००००

𐅇XXHHHH𐅄ΔΔII = ५२९७७

स्पष्ट है कि इस अंक-पद्धति में अनेक कठिनाइयां हैं। इसलिए यह अंक-पद्धति अधिक दिनों तक नहीं टिकी। इसीलिए यूनानियों ने एक नई अंक-पद्धति को जन्म दिया था। उन्होंने अपनी नई लिपि की वर्णमाला का संख्याएं लिखने में उपयोग किया !

यूनानी वर्णमाला में २४ अक्षर थे। तीन नये अक्षर बनाए गए। इस प्रकार कुल २७ अक्षरों की एक नई अंक-पद्धति को जन्म दिया गया, जो इस प्रकार थी :

A	B	Γ	Δ	E	F	Z	H	Θ
१	२	३	४	५	६	७	८	९
I	K	Λ	M	N	Ξ	O	Π	Ϙ
१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०
P	Σ	T	Y	Φ	X	Ψ	Ω	ϡ
१००	२००	३००	४००	५००	६००	७००	८००	९००

यूनानी अक्षरांक

यूनान की इस अंक-पद्धति में अक्षरों का इस्तेमाल किया गया था, इसलिए इसे **अक्षरांक-पद्धति** कहना बेहतर होगा। यूनानी काल में संख्याओं को लिखने में बड़े अक्षरों का

$/A$ = १०००, $/B$ = २०००, $/\Gamma$ = ३०००, इत्यादि।

दस हजार को निम्न प्रकार से लिखा जाता था :

M या $\overset{Y}{M}$ = १००००, $\overset{B}{M}$ = २००००, $\overset{\Gamma}{M}$ = ३०००० इत्यादि।

इस्तेमाल होता था, परन्तु मध्ययुग के यूरोप में छोटे अक्षरों से भी संख्याओं को लिखते थे।

अक्षरों और अक्षरांकों का भेद समझने के लिए अक्षरांकों के ऊपर एक आड़ी लकीर लिख दी जाती थी। हजार की संख्याओं को इन अक्षरों की बायीं ओर एक तिरछी लकीर खींचकर व्यक्त किया जाता था।

यही थी यूनानी अक्षरांक-पद्धति। लगभग दो हजार साल तक यूरोप के देशों में इसका इस्तेमाल होता रहा। साथ-साथ रोमन अंक-पद्धति भी चलती रही। भारतीय अंकों का यूरोप में प्रवेश कम से कम हजार साल पहले हो चुका था, पर यूरोप वालों ने इसे स्वीकार नहीं किया था। अभी तीन सौ साल पहले तक यूरोप में रोमन और इस यूनानी अंक-पद्धति का ही इस्तेमाल होता था।

स्पष्ट है कि इस यूनानी अक्षरांक-पद्धति में कई कमियां थीं। यूनान ने बड़े-बड़े गणितज्ञों को पैदा किया है। पर यह देखकर आश्चर्य होता है कि वे शून्य का आविष्कार नहीं कर सक और न एक वैज्ञानिक अंक-पद्धति को ही जन्म दे सके। इस यूनानी अक्षरांक-पद्धति में गणना करने में बड़ी दिक़्क़तें होती थीं, फिर भी यूनानी गणितज्ञों ने गणितशास्त्र को बहुत आगे बढ़ाया था। मध्ययुग में जब भारतीय अंक-पद्धति यूरोप के देशों में फैली तब से तो वहां गणित ने बहुत ही तेजी से उन्नति की है।

भारतीय अंक-पद्धति के सामने यूनानी अंक-पद्धति टिक नहीं सकी। हां, गणित में आज भी यूनानी अक्षरों का इस्तेमाल होता है। परन्तु यह यूनानी अक्षरांक-पद्धति अब पुरानी पोथियों में ही देखने को मिलती है।

रोमन अंक-पद्धति

रोमन अंकों का थोड़ी-बहुत मात्रा में आज भी प्रयोग होता है। गणित के क्षेत्र में रोमन लोग यूनानियों से आगे नहीं बढ़े थे, परन्तु उनकी अंक-पद्धति का यूरोप में शताब्दियों तक इस्तेमाल होता रहा। अभी १७०० ई. तक यूरोप के स्कूलों, बैंकों आदि में इन्हीं रोमन अंकों का बोलबाला था। यूरोप वाले भारतीय अंकों को भी जानते थे, परन्तु रोमन अंकों का मोह छोड़ने के लिए वे आसानी से तैयार नहीं हुए। यूरोप के गणितज्ञों ने जब भारतीय अंक-पद्धति को अपनाया तभी आज से लगभग तीन सौ साल पहले यूरोप के स्कूलों, बैंकों आदि ने भी भारतीय अंकों को अपनाया।

रोमन अंक-पद्धति में ये सात संकेत हैं :

I	V	X	L	C	D	M
१	५	१०	५०	१००	५००	१०००

इनमें से आरम्भ के केवल तीन संकेतों से १ से १० तक की संख्याएं लिखी जाती हैं; जैसे,

I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०

रोमन साम्राज्य के उदय के साथ ही इन रोमन अंकों का जन्म हुआ था। समय-समय पर इनमें फेर-बदल भी होता रहा है। रोमन अंकों का जन्म हाथ की उंगलियों के आधार पर हुआ है। लातिन भाषा के 'डिजिटुस्' शब्द का अर्थ होता है उंगली। रोमन लोग किसी

भी अंक-संकेत को 'डिजिटुस्' कहते थे। इसी से अंग्रेजी का 'डिजिट' शब्द बना है। रोमन अंक-संकेत हाथ की उंगलियों से किस प्रकार बने, इसे नीचे के चित्र से समझा जा सकता है :

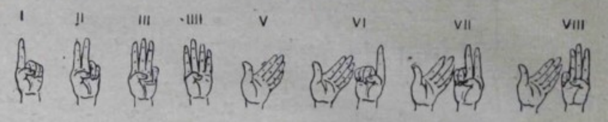

हाथ की उंगलियों से रोमन अंकों का निर्माण

प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताओं में १, २ और ३ के लिए खड़ी लकीरें इस्तेमाल होती थीं। आरम्भ में रोमन लोग ४ को IIII से ही लिखते थे। ५ का संकेत दो प्रकार से बना हो सकता है। एक तो जैसा हाथ की उंगलियों से दिखाया गया है। दूसरा मत यह भी है कि पहले १० का X संकेत बना होगा और फिर उसके ऊपर के आधे अंश V को ५ के लिए मान लिया गया होगा। १० के संकेत X की उत्पत्ति के बारे में यह कल्पना की जाती है कि पहले दस लकीरों को दोनों ओर से काट दिया जाता होगा। बाद में दस लकीरों को छोड़ दिया गया और १० के लिए गुणन जैसा चिह्न लिखा जाने लगा; जैसे,

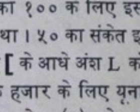

= १० + ३ = १३

आरम्भ में ९ को VIIII के रूप में लिखा जाता था, परन्तु बाद में इसे X–I = IX बना दिया गया। घटाने का यह तरीका दूसरी अंक-पद्धतियों में भी देखने को मिलता है।

रोमन अंक-पद्धति में १०० के लिए C चिह्न है। यह लातिन के केन्तुम् (सौ) शब्द का पहला अक्षर है। इसका १०० के लिए इस्तेमाल होने लगा। पुराने जमाने में यह संकेत] की तरह लिखा जाता था। ५० का संकेत इसी संकेत से बना है। ५० को ××××× से लिखने में झंझट थी। इसलिए [के आधे अंश L को लेकर उससे संख्या ५० को लिखा जाने लगा।

आरम्भ में एक हजार के लिए यूनानी अक्षर ɸ (फाइ) का इस्तेमाल होता था। बाद में रोमन लोग इसे (I) के रूप में लिखने लगे। चूंकि रोमनों की लातिन भाषा में हजार के लिए 'मिले' शब्द था, इसलिए वे बाद में १००० को M अक्षर से लिखने

लग गए थे और आज भी रोमन अंक-पद्धति में हजार के लिए इसी M का प्रयोग होता है ।

परन्तु हजार के पुराने संकेत (I)से ५०० के लिए एक नया संकेत बनाया गया था । हजार के इस संकेत को आधा बनाकर ५०० को I) संकेत से लिखा जाता था । बाद में यही संकेत D के आकार का बन गया और आज रोमन अंक-पद्धति में ५०० के लिए इसी D का इस्तेमाल होता है ।

हजार से बड़ी संख्याएं लिखने में रोमन अंक-पद्धति में कोई स्थिर व्यवस्था देखने को नहीं मिलती । १०,००० को((I)) से और १००,००० को प्राय: (((I)))से लिखा जाता था । ईसा के पहले की तीसरी शताब्दी में यानी सम्राट अशोक के काल का एक रोमन स्मारक मिलता है । इसमें संख्या २३,००००० को एक लाख के चिह्न (((I))) को २३ बार दोहरा कर लिखा गया है ! यह दशा थी रोमन अंक-पद्धति की !

आज से करीब एक हजार साल पहले हमारे देश के अंक और अंक-पद्धति यूरोप के देशों में पहुंच चुकी थी । फिर भी यूरोप के लोग सदियों तक रोमन अंकों के मोह को नहीं त्याग सके । अठारहवीं सदी तक बहीखातों में वहां रोमन अंकों का इस्तेमाल होता रहा । १३०० ई. में यूरोप के शहरों की कुछ बैंकों में भारतीय अंकों का प्रयोग कानून द्वारा बंद कर दिया गया था । भारतीय अंकों के विरोध में तर्क दिया जाता था कि इन्हें आसानी से बदला जा सकता है; जैसे; ० (शून्य) को 9 या 6 में आसानी से बदला जा सकता है ।

परन्तु यूरोप के गणितज्ञ भारतीय अंक-पद्धति के महत्व को समझते थे । इसलिए वे इसे अपनाने के पक्ष में थे । यूरोप में जब पुस्तकें छपने लगी तो वहां भारतीय अंकों का तेजी से प्रचार हुआ । आज सारे यूरोप में भारतीय अंकों का ही इस्तेमाल होता है ।

रोमन अंक आज भी जीवित हैं । पुरानी घड़ियों में और पुस्तकों में भी इनका जहां-तहां प्रयोग होता है ।

भारतीय अंक-पद्धतियां

अब तक हमने दूसरे देशों की प्राचीन अंक-पद्धतियों का परिचय प्राप्त किया । हमारी वर्तमान अंक-पद्धति के महत्व को समझने के लिए इन प्राचीन अंक-पद्धतियों के बारे में जानना जरूरी था ।

आदमी ने धीरे-धीरे उन्नति की है । ज्ञान-विज्ञान की बातें भी धीरे-धीरे खोजी गई हैं । यदि कोई कहे कि ज्ञान-विज्ञान की सारी बातें हमारे देश में ही खोजी गई थीं, तो यह कोरी पोंगापंथी की बात होगी । दूसरे कई देशों की सभ्यताएं हमारे देश की सभ्यता से कम प्राचीन नहीं हैं । वेदों की रचना होने के सैकड़ों साल पहले दूसरे देशों में, न केवल धर्म-कर्म की, बल्कि गणित, चिकित्सा आदि विषयों पर स्वतन्त्र पुस्तकें लिखी जा चुकी थीं । हमारे वैदिक ऋषियों को ज्योतिष और गणित का जितना ज्ञान था उससे कहीं अधिक ज्ञान उनके सैकड़ों साल पहले मिस्र और मेसोपोटामिया के पंडित-पुरोहितों को था ।

तात्पर्य यह कि हमें अपने दिमाग से यह दिक़ियानूसी ख्याल निकाल देना चाहिए कि हमारे पूर्वज हमसे और सारी दुनिया से बढ़े-चढ़े थे । आज हम जानते हैं कि हमारी वर्तमान अंक-पद्धति की खोज भारत में हुई है । आज सारे संसार में इसी अंक-पद्धति का इस्तेमाल होता है । विज्ञान के क्षेत्र में संसार को भारत की यह सबसे बड़ी देन है ।

परन्तु इससे हमें यह नहीं समझना चाहिए कि हमारे देश की यह खोज बहुत पुरानी है । दरअसल, इस नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल हमारे देश में भी पिछले लगभग डेढ़ हजार

साल से ही हो रहा है। उसके पहले हमारे देश में भी कई दूसरी अंक-पद्धतियों का अस्तित्व रहा है। और, हमारे देश की ये दूसरी अंक-पद्धतियां दूसरे देशों की प्राचीन अंक-पद्धतियों से बेहतर नहीं थीं। इसलिए हमारी आज की अंक-पद्धति को जानने के लिए हमें हमारे देश की दूसरी प्राचीन अंक-पद्धतियों को जानना जरूरी हो जाता है।

आओ, अब हम अपने देश की अंक-पद्धतियों की शुरू से ही खोजबीन करें...

सिन्धु सभ्यता के अंक

सन् १९२० के बाद हमारे देश में एक नई सभ्यता की खोज हुई। इसे सिन्धु सभ्यता या हड़प्पा संस्कृति के नाम से जाना जाता है। मोहेंजोदड़ो और हड़प्पा में इस सभ्यता के नगरों के अवशेष मिले हैं। ये दोनों स्थान अब पश्चिम पाकिस्तान में चले गए हैं। परन्तु भारतीय पुराविदों ने गुजरात, राजस्थान, पंजाब और पश्चिमी उत्तर-प्रदेश में इस सभ्यता के लगभग सौ नए स्थान खोज निकाले हैं।

यह सभ्यता लगभग पांच हजार साल प्राचीन है। यह भी पता चलता है कि ईसा से करीब डेढ़ हजार साल पहले यह सभ्यता नष्ट हो चुकी थी। विद्वानों का अनुमान है कि बाहर से आए हुए आर्यों ने इस सभ्यता को नष्ट किया था।

सिन्धु सभ्यता के बारे में बहुत-सी सामग्री खोजी गई है। मोहेंजोदड़ो और हड़प्पा बड़े नगर थे। इन नगरों की सड़कें सीधी और चौड़ी थीं। गंदे पानी को बहाने के लिए सड़कों के किनारे नालियां बनी थीं। मकान दो मंजिल के होते थे और घरों में कुएं होते थे। धान्य का संग्रह करने के लिए बड़े-बड़े धान्य-कोठार बने हुए थे।

सिन्धु सभ्यता के लोगों को अभी लोहे का ज्ञान नहीं था। उनके औजार पत्थर और तांबे या कांसे के होते थे। फिर भी सिन्धु सभ्यता के लोग काफी उन्नति कर चुके थे। सुमेर-बेबीलोन के साथ उनका व्यापार चलता था।

उनकी उन्नत अवस्था का पता इसी से चलता है कि वे लिखना जानते थे, उनकी एक

लिपि थी। सिन्धु सभ्यता की लगभग दो हजार मुहरें मिली हैं। इन मुहरों पर पशु-पक्षी, पेड़-पत्तों और मानव की आकृतियां उकेरी हुई हैं। साथ ही इन पर लिपि के चिह्न खोदे हुए हैं। पिछले पचास सालों में कई विद्वानों ने इस लिपि को पढ़ने की कोशिश की है, परन्तु अभी तक किसी को भी इसमें सफलता नहीं मिल सकी है। फिर भी इस लिपि के बारे में कुछ बातें जानी गई हैं।

सिन्धु लिपि वर्णमालात्मक नहीं हो सकती। दूसरे देशों में भी इतनी प्राचीन कोई भी लिपि वर्णमालात्मक नहीं थी। सिन्धु लिपि में लगभग ३०० चिह्न हैं। इतने चिह्नों वाली लिपि वर्णमालात्मक हो ही नहीं सकती। इतने संकेतो वाली लिपि भाव-संकेत, निर्धारक-संकेत, ध्वनि-संकेत आदि का एक मिश्रण हो सकती है। अब तक इतना जाना गया है कि सिन्धु लिपि दायीं ओर से बायीं ओर को लिखी जाती थी।

लिपि के साथ अंक-संकेतों का होना जरूरी है। किन्तु अभी तक सिन्धु लिपि को पढ़ा नहीं गया है, इसलिए अंकों के बारे में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। लेकिन हम जानते हैं कि सभी प्राचीन सभ्यताओं में कम से कम १ से १० तक की संख्याओं के लिए खड़ी लकीरों का इस्तेमाल हुआ है। सिन्धु लिपि की मुहरों पर भी ये खड़ी लकीरें देखने को मिलती हैं।

सिन्धु सभ्यता की मुहरें। इनमें देखो खड़ी लकीरों वाले संकेत।

इन खड़ी लकीरों को अंक-संकेत मानने में कोई हर्ज नहीं है। अब तक इन मुहरों पर

सबसे बड़े १३ लकीरों वाले समूह को खोजा गया है। यदि ये लकीरें सचमुच ही संख्याएं हैं तो सिन्धु लिपि की नीचे की लकीरें १ से १३ तक की संख्याएं होनी चाहिए —

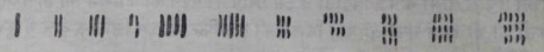

सिन्धु सभ्यता के १ से १३ तक के अंक-संकेत

इन लकीरों की रचना को गहराई से देखने पर यह भी पता चलता है कि अक्षरों की तरह संख्या-रेखाएं भी दायीं ओर से बायीं ओर को लिखी जाती थीं। इन मुहरों में बड़ी संख्याओं के लिए भी संकेत होंगे, पर आज हम उन्हें पहचानने में असमर्थ हैं।

प्राचीन सुमेर-बेबीलोन और मिस्र में गणितशास्त्र काफी उन्नति कर चुका था। सिन्धु सभ्यता वाले भी गणित या गणनाओं में उनसे पिछे नहीं रहे होंगे। बड़े नगरों वाली और व्यापार करने वाली सभ्यता को हिसाब-किताब की जरूरत पड़ती ही है।

सिन्धु सभ्यता के पुराने नगरों से छोटे-बड़े कई बाट और तराजू मिले हैं। इन बाटों को निश्चित अनुपातों के अनुसार छोटा-बड़ा बनाया गया है। सिन्धु सभ्यता की मापने की एक पट्टी का टुकड़ा भी मिला है। इससे हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि सिन्धु सभ्यता में माप-तौल की अच्छी व्यवस्था थी। सिन्धु सभ्यता के मोहेंजोदड़ो और हड़प्पा नगर और इनकी सड़कें योजना के अनुसार बनाई गई हैं। इसलिए उन्हें ज्यामिति का भी अच्छा ज्ञान रहा होगा।

इन सब बातों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि सिन्धु सभ्यता में गणित ने काफी उन्नति की होगी। उनकी अंक-पद्धति भी काफी विकसित रही होगी। पर आज हम उस अंक-पद्धति की सारी बातें नहीं जान सकते।

ईसा के करीब डेढ़ हजार साल पहले सिन्धु सभ्यता नष्ट हो जाती है। तब से सम्राट अशोक के समय तक अपने देश में हमें कोई लिपि-संकेत या अंक-संकेत देखने को नहीं मिलता। परन्तु अशोक के समय के पहले के वैदिक साहित्य में संख्याओं के बारे में बहुत सारे उल्लेख मिलते हैं। उन उल्लेखों से हमें उस समय की अंक-पद्धति के बारे में जानकारी मिलती है।

वैदिक अंक-पद्धति

वेद हमारे सबसे पुराने ग्रंथ हैं। इनमें ऋग्वद सबसे पुराना ह। ऋग्वेद की रचना १२०० ई. पू. के आसपास हुई। ऋग्वेद के काल में और अशोक के काल में लगभग एक हजार साल का अन्तर है। बीच के इस लम्बे काल का हमारे देश में कोई लेख नहीं मिलता, इसलिए हम नहीं जानते कि अंकों के चिह्न किस प्रकार के थे।

जिस समय वेदों की रचना हुई है उस समय शायद आर्यों की अपनी कोई लिपि नहीं थी। पर संख्याओं को लिखना वे जरूर जानते होंगे; अंक-संकेत अवश्य रहे होंगे। पर वे कैसे लिखे जाते थे, यह जानने का कोई साधन नहीं है। किन्तु वैदिक साहित्य में संख्याओं के लिए आए हुए शब्दों से हम उस समय की अंक-पद्धति का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

ऋग्वेद में एक, द्वि, त्रि, चतुः, पंच, षट, सप्त, अष्ट, नव, दश, शत (१००), सहस्र (१०००) और अयुत (१००००) शब्द आए हैं। गणना की इन्हीं संज्ञाओं से सारी संख्याएं लिखी जाती थीं। ऋग्वेद में संख्या की सबसे बड़ी इकाई है 'अयुत' (दस हजार)। लाख, कोटि, अरब आदि के लिए ऋग्वेद में कोई शब्द नहीं मिलता। वैसे ऋग्वेद में आई हुई सबसे बड़ी संख्या है 'षष्टिः सहस्र' (६००००)।

ऋग्वेद में 'शून्य' शब्द नहीं मिलता। हां, 'खे' शब्द आया है, जिसका अर्थ है 'सूराख' या 'छेद'। बहुत बाद में जाकर 'ख' शब्द का अर्थ 'आकाश' या 'शून्य' हुआ।

यजुर्वेद में संख्याओं के कई उल्लेख मिलते हैं और वह भी बड़ी-बड़ी संख्याओं के।

एक स्थान पर १ से ३३ तक की सारी विषम संख्याएं गिनाई गई हैं। एक स्थान पर तो ४ का एक दर्जन तक (४ × १२ तक) पहाड़ा ही दिया हुआ है। हमने देखा है कि ऋग्वेद में १ से अयुत (१००००) तक गणनासूचक शब्द आए हैं। परन्तु यजुर्वेद में इस क्रम को और आगे बढ़ाया गया है। एक मन्त्र में 'परार्ध' पर्यन्त की संख्याएं गिनाई गई हैं। ये हैं :

एक	१	प्रयुत	१०००००००
दश	१०	अर्बुद	१००००००००
शत	१००	न्यर्बुद	१०००००००००
सहस्र	१०००	समुद्र	१००००००००००
अयुत	१००००	मध्य	१०००००००००००
नियुत	१०००००	अन्त	१००००००००००००
		परार्ध	१०००००००००००००

यहां हर संख्या पहले की संख्या से दस गुना बड़ी है। ये **दशगुणोत्तर** संख्याएं हैं। ऋग्वेद के संख्या-शब्दों में भी हम देखते हैं कि गणना का आधार दस ही है। दरअसल, शुरू से ही हमारे देश में गणना का आधार दस रहा है। सिन्धु सभ्यता में गणना का आधार क्या था, इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता।

वेदों में बड़ी-बड़ी संख्याओं को भले ही गिनाया गया हो, परन्तु वैदिक लोग शून्य के बारे में नहीं जानते थे। हमारी आज की वैज्ञानिक अंक-पद्धति की खोज उन्होंने नहीं की है।

वैदिक मन्त्रों को गुरु-शिष्य परम्परा में सुन-सुनकर याद रखने की परम्परा थी। इसीलिए इन्हें 'श्रुति' कहते हैं। वैदिक ऋषि शायद लिखना नहीं जानते थे। परन्तु छोटी-बड़ी संख्याओं को लिखना वे अवश्य जानते होंगे। उन्हें हजारों गायें दान में मिलती थीं। इन गायों का हिसाब जरूर रखा जाता होगा। गायें वैदिक आर्यों की सबसे बड़ी सम्पत्ति थीं।

ऋग्वेद में एक जगह पर उल्लेख है — "मुझे ऐसी हजार गायें दो जिनके कानों पर आठ लिखा हो।"

ऐसा जान पड़ता है कि गायों को पहचानने के लिए उनके कानों या बदन के अन्य भागों पर अंकों के निशान बनाए जाते थे। आज भी गायों और बैलों के बदन पर निशान बनाने की प्रथा है। ऊपर के उल्लेख का शायद यही अर्थ है कि, मुझे ऐसी गायें दो जिनके कान

पर आठ का अंक लिखा हो। लेकिन वह आठ का अंक किस प्रकार लिखा जाता था, यह हम नहीं जानते ।

वैदिक काल में जुआ भी खेला जाता था। ऋग्वेद में एक जुआरी अपने भाग्य पर रोता हुआ कहता है—" एक पर बाजी लगाकर में अपनी पतिव्रता स्त्री को हार बैठा। " यहां ' एक ' का अर्थ पासे पर अंकित एक के चिह्न से है।

तात्पर्य यह कि वैदिक काल में संख्याओं के तो उल्लेख मिलते ही हैं, अंक-संकेतों के भी उल्लेख मिलते हैं। पर वे अंक कैसे लिखे जाते थे, इसके बारे में हमें कोई जानकारी नहीं मिलती।

पहली बार अशोक के अभिलेखों में हमें ब्राह्मी लिपि के अंक-संकेत देखने को मिलते हैं। इसलिए अब हम उन्हीं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

अशोक की ब्राह्मी लिपि के अंक

अशोक ने ईसा के पहले की तीसरी सदी के मध्यकाल में चालीस साल तक भारत के एक विशाल भाग पर शासन किया। कहते हैं कि पहले अशोक क्रूर स्वभाव का था। उसने कलिंग देश पर चढ़ाई की थी, जिसमें एक लाख आदमियों की जानें गईं। इसके बाद अशोक बौद्धधर्म में दीक्षित हुआ और उसने अपना शेष जीवन धर्म के प्रचार और जनता के कल्याण के लिए खर्च किया।

अशोक ने अपने सारे राज्य में धर्म और नीति संबन्धी अपने आदेश शिलाओं और स्तम्भों पर खुदवाए हैं। दर्जनों की संख्या में अशोक के शिलालेख और स्तंभलेख मिले हैं। ये लेख जिस लिपि में हैं उसे हम आज **ब्राह्मी लिपि** के नाम से जानते हैं। पर अशोक ने अपने लेखों में इस लिपि को 'धम्मलिपि' कहा है। अभी डेढ़ सौ साल पहले तक हमारे देश के पंडित अशोक की इस लिपि को पढ़ना नहीं जानते थे। ब्राह्मणों के ग्रन्थों में हमारे देश के इस महान शासक के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती। केवल कुछ बौद्ध ग्रन्थों में ही अशोक के बारे में कुछ कथाएं मिलती हैं।

सन् १८३८ में **जेम्स प्रिन्सेप** नाम के एक विद्वान ने अशोक की ब्राह्मी लिपि को पढ़ने में सफलता प्राप्त की। लिपि के साथ अशोक के लेखों में ब्राह्मी लिपि के कुछ अंक संकेत भी मिलते हैं। अशोक के लेख हिसाब-किताब के बारे में नहीं हैं। इसलिए उनमें सारे अंक-संकेत मिलने की आशा नहीं की जा सकती। अशोक के लेखों में अब तक केवल चार संख्याओं के

संकेत ही देखने में आए हैं। ये संकेत हैं :

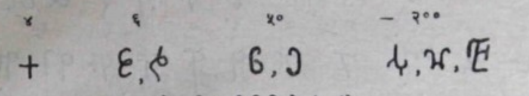

अशोक की ब्राह्मी लिपि के अंक-संकेत

अशोक के समय में और संख्याओं के लिए भी संकेत रहे होंगे। उन अंक-संकेतों का विकास हमें बाद के अभिलेखों में देखने को मिलता है। अशोक के इन अभिलेखों में और बाद के कई शताब्दियों के अभिलेखों में हमें शून्य के लिए कोई चिह्न नहीं मिलता। यहां हम देखते हैं कि अशोक के समय में ५० और २०० के लिए केवल एक-एक संकेत है। और ये चिह्न भी भिन्न-भिन्न आकार के हैं। इसलिए हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि अशोक के समय में भारत में अभी शून्ययुक्त दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति का आविष्कार नहीं हुआ था।

अशोक के बाद महाराष्ट्र में सातवाहन राजाओं का शासन शुरू हो गया था। इन्होंने पूना के आसपास के पहाड़ी प्रदेश में बौद्ध भिक्षुओं और यात्रियों के लिए गुफाएं बनवाई थीं। इन गुफाओं में अनेक लेख खुदे हुए मिलते हैं। नानाघाट की गुफा में खोदे हुए लेखों में अधिक अंक-संकेत मिलते हैं। अशोक के लगभग डेढ़ सौ साल बाद के ये अंक-संकेत हैं :

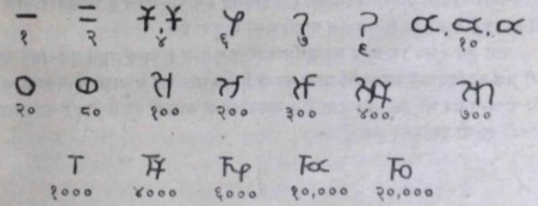

नानाघाट लेखों के अंक-संकेत

इसी प्रकार नासिक के पास की गुफाओं में भी अंक-संकेत मिलते हैं। ये अंक-संकेत हैं :

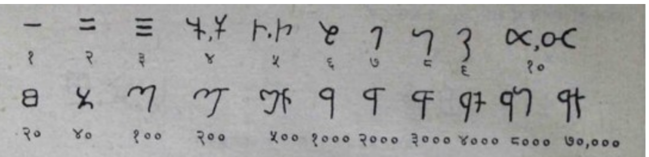

नासिक गुफाओं के ब्राह्मी अंक-संकेत

यहां हम देखते हैं कि १ से १० तक की संख्याओं के लिए लगभग एक-से चिह्न हैं। दहाइयों के लिए भी स्वतन्त्र संकेत हैं। पर १०० के संकेत को मात्राएं या १ से ९ तक के अंक-संकेतों को जोड़कर २००, ३००, ५०० आदि के संकेत बनाए गए हैं। इसी प्रकार १००० के संकेत को मात्राएं या १ से ९ तक के अंक जोड़कर २०००, ३००० आदि के संकेत बनाए गए हैं।

इन लेखों में शून्य के लिए कहीं भी कोई संकेत नही मिलता। इसलिए हम कह सकते हैं कि अभी शून्ययुक्त स्थानमान अंक-पद्धति का आविष्कार नहीं हुआ था।

शून्य का आविष्कार होने तक इन्हीं अंक-संकेतों का विकास होता रहा। बाद में जब शून्य का आविष्कार हुआ तो शुरू के १ से ९ तक के अंक-संकेत जीवित रहे और शेष सारे संख्या-संकेत मर गए। यही कारण है कि हमें आज के हमारे अंकों का अशोक के समय से सिलसिलेवार विकास देखने को मिलता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि हमारे आज के नौ अंकों का विकास अशोक के समय के ब्राह्मी अंकों से हुआ है।

आगे हम देखेंगे कि शून्य का आविष्कार कब हुआ। उसके पहले हमें अपने देश की दूसरी अंक-पद्धतियों की जानकारी प्राप्त करनी है। हमारे देश में ब्राह्मी के अलावा खरोष्ठी लिपि के अंकों का भी इस्तेमाल हुआ है। वर्णमाला के आधार पर बनी हुई कई अक्षरांक-पद्धतियों का भी इस्तेमाल हुआ है।

खरोष्ठी अंक

अशोक के समय में उत्तर-पश्चिम भारत में खरोष्ठी लिपि का प्रचार था। इसलिए अशोक ने इस प्रदेश के अपने लेख खरोष्ठी लिपि में ही खुदवाए थे। अशोक के करीब डेढ़ सौ साल पहले इस लिपि ने जन्म लिया था। अशोक के बाद शक, पार्थव और कुषाण राजाओं ने भी इस लिपि का इस्तेमाल किया है। ४०० ई. के आसपास भारत से यह लिपि लुप्त हो जाने पर भी मध्य-एशिया में आगे के दो-तीन सौ साल तक इसका इस्तेमाल होता रहा।

ब्राह्मी लिपि के सामने यह लिपि अधिक दिनों तक टिक ही नहीं सकती थी। खरोष्ठी लिपि दायीं ओर से बायीं ओर को लिखी जाती थी और इसकी वर्णमाला पूरी नहीं थी। इसलिए संस्कृत भाषा को इस लिपि में लिखने में कठिनाइयां थीं। फिर भी करीब आठ सौ साल तक यह लिपि उत्तर-पश्चिमी भारत और मध्य-एशिया में उपयोग में लाई जाती रही।

खरोष्ठी का अर्थ है 'गधे के ओठ वाली'। बड़ा विचित्र नाम है!

अशोक के लेखों में १, २, ४ और ५ के लिए संकेत मिलते हैं। खरोष्ठी के ये संकेत खड़ी किन्तु बायीं ओर थोड़ी तिरछी लकीरों से लिखे गए हैं। अशोक के खरोष्ठी लेखों में और संख्याओं के लिए अंक-संकेत नहीं मिलते, इसलिए हम खरोष्ठी की अंक-पद्धति का अंदाजा नहीं लगा सकते। किन्तु अशोक के बाद के शक, पार्थव व कुषाण राजाओं के लेखों में जो खरोष्ठी अंक-संकेत मिलते हैं, उनके आधार पर हमें खरोष्ठी अंक-पद्धति की जानकारी

मिल जाती है। इन लेखों में आए हुए अंक-संकेत या संख्या-संकेत ये हैं:

शक, पार्थव और कुषानों के अभिलेखों से							अशोक के अभिलेखों से	
{1	१००	33	४०	//X	६	/	/	१
{//	२००	733	५०	///X	७	//	//	२
5///	३००	333	६०	XX	८	///		३
//3{1	१२२	2333	७०	7	१०	X	////	४
X7373{//	२७४	3333	८०	3	२०	/X	/////	५

खरोष्ठी अंक

अशोक के लेखों में ४ के लिए चार लकीरों वाला चिह्न है। परन्तु बाद में ४ को × चिह्न से लिखा जाने लगा। ५ से ८ तक के चिह्न इस चिह्न के बायीं ओर खड़ी लकीरें खींचकर लिखे गये हैं, क्योंकि खरोष्ठी लिपि दायीं ओर से बायीं ओर को लिखी जाती थी। ९ के लिए ।×× जैसा चिह्न रहा होगा।

खरोष्ठी में १० के लिए स्वतन्त्र चिह्न है। इस चिह्न की बायीं ओर १ से ९ तक के अंक लिखकर ११ से १९ तक की संख्याएं लिखी जाती होंगी। १० के नीचे उसी तरह का चिह्न जोड़ देने पर २० का चिह्न बनता था। इन चिह्नों की सहायता से ९९ तक की संख्याएं लिखी जाती थीं।

१०० के लिए पुनः एक स्वतन्त्र संकेत है। इसके दायीं ओर एक खड़ी लकीर होने से यह १०० बनता है, दो खड़ी लकीरें होने से २०० बनता है, इत्यादि। दहाई और इकाई के अंक इसके बायीं ओर लिखे गए हैं। उदाहरण:

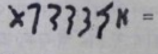 = २७४

यहां दायीं ओर से बायीं ओर को क्रमशः संकेत हैं: २, १००, २०, २०, २०, १० और

४। खरोष्ठी अंक-पद्धति के अनुसार इनका गठन होगा : २ × १०० + २० + २० + २० + १० + ४ = २७४।

यहां हम देखते हैं कि गणना का आधार दस ही है। खरोष्ठी अंक-पद्धति में भी शून्य नहीं है। दरअसल, उस समय की ब्राह्मी अंक-पद्धति से खरोष्ठी अंक-पद्धति घटिया दर्जे की नहीं है।

खरोष्ठी अक्षर और अंक पश्चिमी एशिया की आरमेई लिपि के आधार पर बनाए गए थे। इस लिपि ने लगभग आठ सौ साल तक कई धर्मों की सेवा की है। मध्य-एशिया से खरोष्ठी लिपि में लिखी हुई बौद्ध धर्म की पुस्तकें मिली हैं। बाद में भारत में, और मध्य-एशिया में भी, इसका स्थान ब्राह्मी लिपि ने ले लिया था।

बड़ी-बड़ी संख्याएं

हमने देखा है कि ऋग्वेद में संख्या की सबसे बड़ी इकाई के लिए शब्द है अयुत (१००००) और सबसे बड़ी संख्या है षष्टिः सहस्र (६००००)। यजुर्वेद में परार्ध (१०००००००००००००) तक की संख्या-संज्ञाएं गिनाई गई हैं।

जैन और बौद्ध पण्डित ब्राह्मण-पुरोहितों से पीछे रहने वाले नहीं थे। संख्याएं दश-गुणोत्तर थीं। इसलिए दशगुणोत्तर संख्याओं के लिए शब्द गढ़ते जाने में कोई कठिनाई नहीं थी। उन्होंने दशगुणोत्तर संख्याओं के लिए संज्ञाएं गढ़ीं और इस प्रकार अपनी दिमागी कसरत का अच्छा परिचय दिया। हमें यह जान लेना चाहिए कि वास्तविक जीवन में इन बड़ी संख्याओं का इस्तेमाल नहीं होता था।

वेदों के बाद तैत्तिरीय, ऐतरेय आदि ब्राह्मण-ग्रंथों की रचना हुई। थोड़े हेरफेर के साथ यजुर्वेद की संख्या-सूची इन ग्रन्थों में भी मिलती है।

बौद्धधर्म का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है 'ललितविस्तर'। कुछ अशुद्ध संस्कृत भाषा में रचे गए इस ग्रन्थ में भगवान बुद्ध का जीवन-चरित्र है। यह ईसा की पहली या दूसरी सदी में लिखा गया था। इसमें एक स्थान पर गौतम के गुरु अर्जुन और उनके बीच एक संवाद आता है :

अर्जुन : नवयुवक ! क्या तुम कोटि के आगे की शतोत्तर गणना जानते हो ?

गौतम : हां, जानता हूं।

अर्जुन : तो बताओ, कोटि के आगे की गणना किस प्रकार है ?

इसके बाद गौतम (बोधिसत्त्व) कोटि के आगे की शतोत्तर संख्याओं के नाम बतलाते हैं। अन्तिम संख्या का नाम है 'तल्लक्षणा'। तल्लक्षणा संख्या होगी $१०^{५३}$, यानी ऐसी संख्या जिसमें १० के आगे ५२ शून्य हो !

पालि भाषा के कच्चायन-व्याकरण में सबसे बड़ी संख्या है 'असंख्येय' = $१०^{१४०}$, यानी १ के आगे १४० शून्यवाली संख्या ! यह दिमागी कसरत नहीं तो और क्या है ? क्योंकि सारे विश्व में इस संख्या जितने अणु-परमाणु भी नहीं हैं।

जैन पण्डित भी पिछे क्यों रहने लगे ? जैनों के 'अनुयोगद्वार-सूत्र' में बताया गया है कि सारे संसार के जीवों की संख्या $२^{९६}$ है। जैन ग्रन्थों में 'शीर्षप्रहेलिका' नाम की दूसरी बड़ी संख्या मिलती है। अंकों में यह संख्या होगी $८४००००^{२८}$!

बड़ी-बड़ी दशगुणोत्तर या शतगुणोत्तर संख्याओं को नाम देते चले जाने में कोई खास बात नहीं है। यह जानने पर कि संख्याओं की गिनती का कोई अन्त नहीं है, संख्याओं का क्रम अनन्त है, शब्द गढ़ने का यह काम कोई भी कर सकता है।

हमारे देश के आर्यभट, भास्कराचार्य आदि महान गणितज्ञों को इस दिमागी उड़ान की जरूरत नहीं थी। उन्हें गणित और ज्योतिषशास्त्र में जितनी बड़ी संख्याओं की जरूरत पड़ती थी, उतनी ही बड़ी संख्याओं को गिनाया गया है। **आर्यभट** (५०० ई.) ने दशगुणोत्तर संज्ञाएं दी हैं : एक, दश, शत, सहस्र, अयुत (दस हजार), नियुत (लाख), प्रयुत (दस लाख), कोटि, अर्बुद (दस कोटि) और वृन्द (अरब)। **भास्कराचार्य** (११५० ई.) की सूची अधिक पूर्ण है और इसी का हमारे देश में अधिक प्रचार रहा है। भास्कर के **लीलावती** ग्रन्थ में दी हुई यह सूची है :

एक	=	१	अब्ज	=	१०००००००००
दश	=	१०	खर्व	=	१००००००००००
शत	=	१००	निखर्व	=	१०००००००००००
सहस्र	=	१०००	महापद्म	=	१००००००००००००
अयुत	=	१००००	शंकु	=	१०००००००००००००
नियुत	=	१०००००	जलधि	=	१००००००००००००००
प्रयुत	=	१००००००	अन्त्य	=	१०००००००००००००००
कोटि	=	१०००००००	मध्य	=	१००००००००००००००००
अर्बुद	=	१००००००००	परार्ध	=	१०००००००००००००००००

प्राचीन भारत के गणित के ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे गए हैं। ये ग्रन्थ पद्य में हैं। इसलिए संख्याओं को शब्दों में ही लिखा जाता था। अतः यह जानना जरूरी है कि संख्याओं को संस्कृत शब्दों में किस प्रकार लिखा जाता था।

एक से १० तक की संख्याओं के लिए एक-एक शब्द था। ११ से ९९ तक की संख्याओं को लिखने का सामान्य क्रम यह था : पहले दहाई का शब्द लिखा जाता था और उसके बाद इकाई का शब्द। परन्तु जब संख्या दो से अधिक अंकों वाली होती थी तो पहले बड़ी इकाई लिखी जाती थी। हमारी हिन्दी में भी संख्याओं को लिखने का यही क्रम है। १९, ३९ आदि संख्याएं घटाने की पद्धति से लिखी जाती थीं; जैसे, एकान्नविंशति (एक-कम-बीस=उन्नीस) और एकान्नचत्वारिंशत् (एक-कम-चालीस = उनचालीस)।

गणित के पुराने ग्रन्थों में पाए जाने वाले और कुछ उदाहरण हैं :

१३९ = (४० + १००−१), चत्वारिंशच्चैकोनशताधिक।

२९७ = (३००−३), त्रिहीनशतत्रय।

३३३९ = (३००० + ३०० + ३० + ९),

त्रीणि शतानि त्रिसहस्राणि त्रिंश च नव च।

१८ = (२× ९), द्विनवक।

गणितज्ञ **महावीर** (८५० ई.) के ग्रन्थ 'गणितसार-संग्रह' में संख्या १२३४५६५४३२१ को बड़े ही सुन्दर शब्दों में बांधा गया है। इस संख्या को कहा गया है 'एकादिषडन्तानि क्रमेण हीनानि'; अर्थात्, वह संख्या जिसके अंक पहले १ से ६ तक क्रमशः बढ़ते हैं और तब उसी क्रम से घटते हैं !

हमारे देश में आर्यभट (५०० ई.) से भास्कराचार्य (११५० ई.) तक बड़े-बड़े गणितज्ञ हुए। इनके सारे ग्रन्थ संस्कृत पद्य में हैं। संख्याओं को पद्य में लिखने के लिए ही उन्हें ऐसे संख्या-शब्दों का निर्माण करना पड़ा था।

आर्यभट के समय तक हमारे देश में शून्य का आविष्कार हो चुका था। शून्यसहित केवल दस अंकों से सारी संख्याएं लिखने का आविष्कार हो चुका था। परन्तु इन्होंने अंकों का इस्तेमाल नहीं किया। केवल कुछ पुस्तकों में ही अंक देखने को मिलते हैं। उलटे आर्यभट

जैसे महान गणितज्ञ को पद्य में गणित के ग्रन्थ लिखने के लिए एक अक्षरांक-पद्धति को जन्म देना पड़ा। इन अक्षरांक-पद्धतियों के बारे में हम आगे बतलाएंगे।

अब हम देखेंगे कि हमारे देश में शून्य का आविष्कार कब होता है और सबसे पहले शून्यसहित दस अंकों से संख्याएं कब लिखी गई हैं। याद रहे कि भारत का यही सबसे बड़ा आविष्कार है। संसार को भारत की यही सबसे बड़ी देन है।

शून्य का आविष्कार

आज हम केवल दस चिह्नों से सारी संख्याएं लिखते हैं। बड़ी से बड़ी संख्या इन दस चिह्नों से लिखी जा सकती है। इनमें से प्रत्येक चिह्न का एक स्वतन्त्र मान है। इसके अलावा, संख्या की पंक्ति में हर अंक का मान स्थान के अनुसार निर्धारित होता है। उदाहरण के लिए, २ का अर्थ है दो वस्तुएं। परन्तु संख्या २१ में इस २ का अर्थ होगा बीस वस्तुएं। संख्या ४३२५८ में दो का अर्थ होगा २००।

आज हम केवल दस चिह्नों से सारी संख्याओं को लिखने के आदी हो गए हैं। हर अंक का स्थान के अनुसार अर्थ बदलता है, यह बात भी हम आसानी से समझ जाते हैं। पर यह उतनी सरल बात नहीं है, जितनी कि हम इसे समझते हैं। यदि सरल बात होती तो यूनान के बड़े-बड़े गणितज्ञों में से कोई गणितज्ञ अवश्य इसका आविष्कार कर चुका होता। हमारे देश के वैदिक काल के पण्डित-पुरोहित भी इसका आविष्कार कर चुके होते। पर वे दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति का आविष्कार न कर सके।

शून्यवाली स्थानमान अंक-पद्धति एक दिन का दैवी चमत्कार नहीं है। धीरे-धीरे इसके बारे में विचार पक्के होते गए। सारे देश में इसका प्रचार होने में शताब्दियां लगीं। इस नई अंक-पद्धति की खोज होने पर भी लगभग एक हजार साल तक हमारे देश में पुरानी अंक-पद्धति का व्यवहार होता रहा। न केवल अपने देश में, बल्कि विदेशों में भी इस नई अंक-पद्धति को सरलता से स्वीकार नहीं किया गया।

इस नई अंक-पद्धति की खोज ठीक किस समय हुई, कहां हुई, किस व्यक्ति ने की, आदि बातों के बारे में हमें आज कोई ठोस जानकारी नहीं मिलती। इसलिए हम देखेंगे कि भारतीय इतिहास में इस नई अंक-पद्धति के उल्लेख कहां और किस रूप में मिलते हैं।

पुराने जमाने में लेख खुदवाए जाते थे। राजा या धनी लोग दान देते थे। दान की बातें तांबे के पत्रों पर लिख दी जाती थीं। इन ताम्रपत्रों पर तिथि भी डाली जाती थी—शब्दों में और कभी-कभी अंकों में भी। ऐसे ही एक दानपत्र में हमें पहली बार इस नई पद्धति के अंक देखने को मिलते हैं।

संखेड़ा से गुर्जर राजाओं का एक दानपत्र मिला है। इसमें तिथि दी हुई है, चेदि-संवत् ३४६। इस संख्या को ठीक उसी तरह लिखा गया है जैसा हम आज लिखते हैं। फरक इतना ही है कि इसमें उस समय के ३, ४ और ६ के अंक इस्तेमाल हुए हैं। चेदि-संवत् ३४६ का अर्थ हुआ ईसवी सन् ५९४। इस दानपत्र में संख्या ३४६ स्थानमान पद्धति के अनुसार लिखी गई है। पर इस संख्या में शून्य का संकेत नहीं आया है। शून्य न आने का कारण यही है कि वह दानपत्र ऐसी संख्या वाले साल में नहीं लिखा गया था जिसमें शून्य हो।

पर उस समय शून्यवाली दाशमिक अंक-पद्धति का आविष्कार अवश्य हो चुका था; वर्ना संख्या ३४६ को नई पद्धति के अनुसार न लिखा जाता। इसके बाद कई लेखों और दानपत्रों में नई अंक-पद्धति की संख्याएं मिलती हैं। पहली बार आठवीं सदी के एक दानपत्र में शून्यवाली संख्या मिलती है। यह राघोली दानपत्र राजा जयवर्धन-द्वितीय का है। इसमें संख्या ३० में शून्य आता है। इसमें शून्य का आकार छोटे वृत्त की तरह है।

इसके बाद बहुत-से लेखों और दानपत्रों में नई अंक-पद्धति में संख्याएं लिखी हुई देखने को मिलती हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि सारे लेखों में इस नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल हुआ है। नहीं, कुछ लेखों में अब भी पुरानी अंक-पद्धति, जिसमें शून्य और स्थानमान के लिए गुंजाइश नहीं थी, देखने को मिलती है। ईसा की दसवीं शताब्दी तक, यानी आज से लगभग एक हजार साल पहले तक, छुटपुट लेखों में पुरानी अंक-पद्धति की संख्याएं देखने को मिलती हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि शून्यवाली दाशमिक अंक-पद्धति का आविष्कार हुए एक लम्बा समय गुजर जाने पर भी उसे हमारे देश में जल्दी स्वीकार नहीं किया गया। पुराने का मोह जल्दी नहीं छुटा करता, इसका यह एक उदाहरण है। पर दसवीं शताब्दी से सभी

जगह नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल देखने को मिलता है। इस समय तक भारत की यह नई अंक-पद्धति अरब देशों में, भूमध्यसागर के आसपास के देशों में और दूर दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों में पहुंच चुकी थी।

ईसा की पहली शताब्दी से कुछ साहसी भारतीय जावा, सुमात्रा, कंबोडिया आदि देशों में जाकर बसने लग गए थे। वहां उन्होंने राजवंश भी स्थापित किए थे। वहां ब्राह्मण व बौद्ध धर्म पहुंचा; भारतीय भाषाएं पहुंचीं। सुमात्रा के पलेम्बंग स्थान से सातवीं सदी के कुछ ऐसे लेख मिले हैं जिनमें शक-संवत् की ६०५, ६०६ और ६०८ संख्याएं नई अंक-पद्धति में लिखी हुई मिलती हैं।

नई अंक-पद्धति का आविष्कार होते ही अभिलेखों में तुरन्त उसका इस्तेमाल नहीं होने लगा होगा। आविष्कार होने के सदियों बाद अभिलेखों में नई अंक-पद्धति को अपनाया होगा। दूसरी कुछ बातों पर विचार करने से भी हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि ईसा की पहली शताब्दी तक हमारे देश में शून्यवाली नई अंक-पद्धति का आविष्कार हो चुका था। साहित्यिक, दार्शनिक और ज्योतिष-गणित के ग्रन्थों में इस बात के प्रमाण मिलते हैं।

पिंगल छन्दःसूत्र नाम का एक ग्रन्थ है। ईसा से सौ या दो सौ साल पहले आचार्य पिंगल ने इस ग्रन्थ की रचना की थी। पद्य छन्दों में लिखे जाते हैं। छन्दों के लिए मात्रा आदि का हिसाब जानना पड़ता है। इस ग्रन्थ में मात्राओं के इसी प्रकार के हिसाब सूत्रों में दिए गए हैं। ग्रन्थ में 'द्विरर्द्धे', 'रूपे शून्यम्', 'द्विः शून्ये', आदि सूत्र आते हैं। हिसाब कुछ ऐसा है कि यहां 'अभाव' या 'घटाने' के अर्थ में शून्य का इस्तेमाल हुआ है। यह भी पता चलता है कि पिंगल के समय में शून्य के लिए कोई सांकेतिक चिह्न रहा होगा। पर उसका रूप किस प्रकार का था, इसे हम नहीं जानते। हम यह भी नहीं जानते कि उस समय इस शून्य का नई अंक-पद्धति के लिए इस्तेमाल होने लग गया था या नहीं। परन्तु इतना निश्चित है कि शून्यवाली धारणा पक रही थी।

जैन ग्रन्थ 'अनुयोगद्वार-सूत्र' में आई हुई एक बड़ी संख्या का उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। इसी ग्रन्थ में 'अंकस्थान' शब्द आया है, जो अंकों के स्थानमान अर्थवाला हो सकता है। वायु और अग्नि पुराणों में भी अंकस्थानों और दशगुणोत्तर संख्याओं के उदाहरण मिलते हैं। ये सारे ग्रन्थ ईसा की पहली सदी के बाद के हैं।

करीब नब्बे साल पहले पेशावर जिले के भक्षाली गांव में एक किसान को भोजपत्र पर लिखी हुई गणित की एक पोथी मिली थी। अब यह **भक्षाली-हस्तलिपि** के नाम से

प्रसिद्ध है। यह दसवीं सदी की शारदा लिपि में लिखी हुई है। यह किसी पुरानी पुस्तक की प्रतिलिपि है। कुछ विद्वानों का मत है कि मूल पुस्तक तीसरी या चौथी सदी में लिखी गई होगी। इस हस्तलिपि में १ से १० तक अंक-संकेत हैं। नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल हुआ है। शून्य के लिए बिंदी के आकार का चिह्न है। इस पुस्तक में आये हुए दस अंक-संकेत ये हैं :

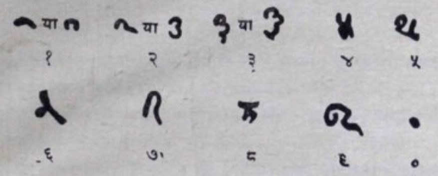

भक्षाली हस्तलिपि के अंक-संकेत

आर्यभट के समय (५०० ई.) से गणित के सारे ग्रन्थों में नई अंक-पद्धति का व्यवहार देखने को मिलता है। पर इनमें अंक नहीं हैं; इनमें अक्षरांक या शब्दांक हैं। इनके बारे में हम आगे बतलाएंगे।

सारी बातों पर विचार करने से हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि ईसा की पहली सदी तक हमारे देश में शून्यवाली नई दाशमिक स्थानमान अंक-पद्धति का आविष्कार हो चुका था।

अक्षरांक

हमने देखा है कि यूनानी लोगों ने अपनी लिपि के अक्षरों का संख्याएं लिखने में इस्तेमाल किया था। हमारे देश में भी अक्षरों से संख्याएं लिखने के कई तरीके खोजे गए थे। अक्षरांकों का इस्तेमाल संस्कृत के गणित-ग्रन्थों में ही हुआ है।

हमारे देश के गणितज्ञों ने अपने गणित के ग्रन्थ पद्य में लिखे हैं। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक बातें भर दी जाती थीं। कण्ठस्थ करने के लिए ही ऐसा किया जाता था।

आर्यभट (जन्म ४७६ ई.) हमारे देश के पहले बड़े गणितज्ञ हैं। इन्होंने **आर्यभटीयम्** नाम का एक ग्रन्थ लिखा है। इस छोटे-से ग्रन्थ में उन्होंने उस समय तक की ज्योतिष और गणित की सारी बातें भर दी हैं। आर्यभट ने संख्याओं को लिखने के लिए एक नई अक्षरांक-पद्धति का आविष्कार किया। इस पद्धति के सारे नियम उन्होंने एक श्लोक में लिख दिए हैं। स पद्धति के अनुसार उन्होंने क् से लेकर म् तक के २५ व्यंजनों को क्रमशः १ से २५ तक के **संख्यामान** दिए। आगे, य् = ३०, र् = ४०, ल् = ५०, व् = ६०, श् = ७०, ष् = ८०, स् = ९०, ह् = १००। और, स्वरों को शतगुणोत्तर मान इस प्रकार दिये :

अ	=	१
इ	=	१००
उ	=	१००००

ऋ = १०००००००

लृ = १००००००००

ए = १००००००००००

ए = १००००००००००००

ओ = १००००००००००००००

औ = १००००००००००००००००

अब केवल वर्णमाला के अक्षरों के मेल से सारी संख्याएं लिखी जा सकती थीं। एक उदाहरण : ख्युघृ = ख्यु + घृ = ३२००००+ ४०००००० = ४३२०००० ।

आर्यभट की यह अक्षरांक-पद्धति आसान नहीं थी ; इसमें कई दिक्कतें थीं। इसलिए इसका केवल उन्होंने ही इस्तेमाल किया ।

आर्यभट की अक्षरांक-पद्धति कठिन थी, इसलिए दूसरे गणितज्ञों ने नई-नई अक्षरांक-पद्धतियों का आविष्कार किया। इनमें क्, ट्, प्, य् अक्षर १ को सूचित करते हैं। ख्, ठ्, फ्, र् अक्षर अंक २ को सूचित करते हैं। ग्, ड्, ब्, ल् अंक ३ को; घ्, ढ्, भ्, व् अंक ४ को; ङ्, ण्, म्, श् अंक ५ को; च्, त्, ष् अंक ६ को; छ्, थ्, स् अंक ७ को; ज्, द्, ह् अंक ८ को; झ्, ध् अंक ९ को और ञ, न् तथा स्वर शून्य को सूचित करते हैं।

चूंकि, यह अक्षरांक-पद्धति क-ट-प-य अक्षरों से शुरू होती है, इसलिए इसे **कटपयादि अक्षरांक-पद्धति** का नाम दिया गया है। कई कटपयादि अक्षरांक-पद्धतियों को बनाया गया था।

हमारे देश में अक्षरों या शब्दों में लिखी गई संख्याओं के बारे में नियम रहा है—**अंकानां वामतो गति**—अर्थात्, अंक दायीं ओर से बायीं ओर को लिखे जाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पहला अक्षर या शब्द इकाई का सूचक होगा, दूसरा दहाई का, तीसरा सैकड़े का, इत्यादि ।

कटपयादि अक्षरांक पद्धति में संख्याएं लिखने में आसानी है। शब्द भी सुन्दर बनते हैं ; जैसे,

२ ४ ४ १
रा – घ – वा – य = १४४२,

४ ४ ६
भ – व – ति = ६४४,

६ ४ ३ १
त – त्वा – लो – क = १३४६, आदि ।

हमारे देश में सदियों तक तरह-तरह की कटपयादि अंक-पद्धतियों का इस्तेमाल हुआ हें। कुछ शिलालेखों में भी इनका प्रयोग देखने को मिलता है। गणितज्ञों ने भी अपने ग्रन्थों मे इनका उपयोग किया है।

कुछ पुरानी हस्तलिपियों में पृष्ठों की संख्या बतलाने के लिए भी अक्षरों का इस्तेमाल हुआ है। ऐसी पुस्तकों में उन्हीं अक्षरों का इस्तेमाल हुआ जिनमें कि वह पुस्तक लिखी गई है। अक्षरों को दिए गए संख्यामानों में एकरूपता नहीं है। इस अंक-पद्धति को **अक्षरपल्ली** कहते हैं।

शब्दांक

हमारे देश में संख्याएं लिखने के लिए शब्दों का खूब उपयोग हुआ है। पद्य में अंक नहीं लिखे जा सकते, इसीलिए हमारे कवियों को अक्षरों और शब्दों की शरण में जाना पड़ा था। कुछ शब्दों के पीछे संख्याओं की भावना छिपी होती है। जैसे, हमारे शरीर में दो हाथ, दो पैर, दो आंखें, दो कान आदि होते हैं। इसलिए कर (हाथ), चक्षु (आंखें), कर्ण (कान), आदि शब्द संख्या २ के लिए इस्तेमाल किए गए। शून्य, ख, 'आकाश, अंतरिक्ष आदि खोखला या छेदवाची शब्द ० के लिए इस्तेमाल किये गए।

इसी प्रकार गुण, काल, अग्नि आदि शब्द ३ के लिए; वेद, समुद्र, युग, दिशा आदि शब्द ४ के लिए; बाण, पाण्डव, तत्त्व, इन्द्रिय आदि शब्द ५ के लिए; रस, ऋतु, अंग, आदि शब्द ६ के लिए; ऋषि, मुनि, वार आदि शब्द ७ के लिए; वसु, नाग, गज आदि शब्द ८ के लिए; अंक, रंध्र, निधि आदि शब्द ९ के लिए; चन्द्र, पृथ्वी, शशि आदि शब्द १ के लिए; अवतार, रावणशिरस्, दिश् आदि शब्द १० के लिए इस्तेमाल हुए। १० से बड़ी संख्याओं के लिए भी शब्दों का व्यवहार हुआ है। जैसे, साल में बारह मास होते हैं, इसलिए 'मास' शब्द का १२ के लिए। गायत्री छन्द में चौबीस अक्षर होते हैं, इसलिए 'गायत्री' शब्द का २४ के लिए। नक्षत्र सत्ताईस होते हैं, इसलिए 'नक्षत्र' शब्द का २७ के लिए, इत्यादि।

शब्दांकों को लिखने के लिए भी **अंकानां वामतो गति** नियम को माना गया है। इस पद्धति में एक ही संख्या को कई तरह के शब्दों में लिखा जा सकता है। जैसे, संख्या १२३० :

	०	३	२	१	
खगुणकरादि	= ख	– गुण	– कर	– आदि	= १२३०,
	०	३	२	१	
खलोककर्णचन्द्र	= ख	– लोक	– कर्ण	– चन्द्र	= १२३०;

काव्य में इस शब्दांक-पद्धति का खूब इस्तेमाल हुआ है। हिन्दी कविताओं में भी यदा-कदा शब्दांकों का प्रयोग देखने को मिलता है। शून्यवाली नई अंक-पद्धति का आविष्कार हो जाने पर भी सदियों तक हमारे देश में तरह-तरह की अंक-पद्धतियों का व्यवहार चलता रहा।

अब हम देखेंगे कि हमारी नई अंक-पद्धति का पहले अरब देशों में और बाद में यूरोप के देशों में कैसे प्रचार हुआ।

अरब देशों में भारतीय अंक

अरबों के साथ भारत के संबंध बहुत पुराने हैं। ईसा के पहले भी फारस की खाड़ी और अलेक्जेंड्रिया के बंदरगाह तक भारतीय माल पहुंचता था। ईसा की पहली सदी से बाकायदा रोमनों के साथ भारत के अच्छे व्यापारी संबंध स्थापित हो गए थे। लेकिन यह उस समय की बात है जब कि अभी दक्षिणी अरबिया के लोग इस्लाम में दीक्षित नहीं हुए थे और हमारे देश में नई अंक-पद्धति का विकास नहीं हुआ था।

सन् ६२२ ई. में अरबिया में इस्लाम की स्थापना होती है। अगले सौ साल के भीतर ही इस्लाम का झण्डा पूर्व में भारत की सीमा तक और पश्चिम में स्पेन देश तक फहराने लगता है। राजधानी बगदाद से खलीफ़ा सारे इस्लामी राज्य पर शासन करने लग जाते हैं।

बगदाद ने एक सांस्कृतिक नगरी और विद्याकेन्द्र का रूप धारण कर लिया। खलीफ़ा ज्ञान-विज्ञान के प्रेमी थे। शुरू के दो-तीन सौ सालों में सैकड़ों यूनानी ग्रन्थों के अरबी भाषा में अनुवाद हुए। गणित, ज्योतिष, चिकित्सा तथा दर्शन के ग्रन्थों को विशेष महत्त्व दिया गया। यूनान और अलेक्जेंड्रिया में यूनानी संस्कृति का लोप हो जाने के बाद अरबी विद्वानों ने यूनानी साहित्य अनुवादों के रूप में सुरक्षित रखा। कई ऐसे यूनानी ग्रन्थ हैं जो आज मूल में नहीं मिलते, परन्तु अरबी अनुवादों में मिल जाते हैं।

अरबी विद्वानों ने यूनानी साहित्य की तरह भारतीय साहित्य से भी लाभ उठाया। खलीफ़ा अल-मंसूर के समय (राज्यकाल : ७५३-७७४ ई.) में सिन्ध के किसी राजा के

दूत बगदाद पहुंचे थे। इनके साथ कुछ भारतीय पण्डित भी थे। ये पण्डित अपने साथ ज्योतिष के सिद्धान्त ग्रन्थ ले गए थे। यह ७७१ ई. की बात है। खलीफ़ा की आज्ञा से बगदाद में इन ग्रन्थों का संस्कृत से अरबी भाषा में अनुवाद हुआ। इसके बाद संस्कृत के ज्योतिष-गणित, चिकित्सा आदि विषयों के अनेक ग्रन्थों के अरबी में अनुवाद हुए।

अरबों की अपनी लिपि थी; उनके अपने अंक भी थे। परन्तु ये अंक अच्छे नहीं थे। अंक-पद्धति पुरानी थी। अरबी विद्वानों को जब भारतीय गणित और ज्योतिष के साथ-साथ नई अंक-पद्धति की जानकारी मिली तो उन्होंने इसे अपनाना बेहतर समझा। नई अंक-पद्धति में केवल दस चिह्नों से काम चल जाता है। भारतीय अंक भी अरब देशों में पहुंच चुके थे। वहां इन्हें **गुबार** अंकों के नाम से जाना जाता था। गुबार का अर्थ होता है धूलि अर्थात् धूल। हमारे देश में पाटी पर धूल बिछाकर उंगली से गणनाएं करने का रिवाज था। अंकगणित को इसीलिए हमारे यहां धूलिकर्म कहते थे।

अरब देशों में नई भारतीय अंक-पद्धति को तो अपना लिया गया, किन्तु अंक-संकेत कौन-से रखे जाएं —— हिन्द के या अरब के ——इस बात को लेकर काफ़ी समय तक कशमकश चलती रही। कई अरबी गणितज्ञों ने अपनी पुस्तकों में भारतीय उत्पत्ति के गुबार अंकों का ही इस्तेमाल किया है। देखिए, ९७० ई. के एक अरबी ग्रन्थ में गुबार अंक किस प्रकार के थे :

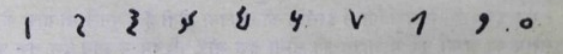

दसवीं सदी की एक अरबी पुस्तक में गुबार (भारतीय) अंक

लेकिन अन्त में अरबी अंकों को ही रखना बेहतर समझा गया। अंक-पद्धति भारतीय थी। अंकों के लिए कोई भी दस चिह्न लिए जा सकते हैं। अरबों ने अपने अंक रखकर अच्छा ही किया। नई भारतीय अंक-पद्धति के ये अरबी अंक हैं :

١ ٢ ٣ ٤ ٥ ٦ ٧ ٨ ٩ ٠

अरबी अंक-संकेत। यहां शून्य के लिए बख्शाली हस्तलिपि की तरह एक बिंदी है।

ऐसा लगता है कि सातवीं शताब्दी के मध्यकाल तक नई भारतीय अंक-पद्धति की

ख्याति सीरिया आदि पश्चिमी एशिया के देशों में पहुंच चुकी थी। सीरिया का एक विद्वान **सेवेरस सेबोख्त** लिखता है—"मैं हिन्द वालों के शास्त्रों के सभी विवेचन को छोड़ देता हूं... । मैं उनकी वर्णनातीत गणना के विषय में भी नहीं कहूंगा। मैं यही कहना चाहता हूं कि यह गणना नौ चिह्नों से की जाती है।"

शून्य के बिंदु या वृत्त को अंक मानने का रिवाज हमारे यहां भी नहीं है। हम भी अंक नौ ही मानते हैं। नौ अंकों से गणना करने का मतलब ही है नई अंक-पद्धति की गणना। सेबोख्त जब नौ भारतीय अंकों की बात करता है तो उसका मतलब है नई अंक-पद्धति, शून्यवाली स्थानमान अंक-पद्धति। गुबार अंकों का ज्ञान अरबों ने पहले-पहल शायद सीरिया से ही प्राप्त किया था।

अरबी विद्वानों ने भी भारतीय अंक-पद्धति की खूब स्तुति की है। कुछ अरबी गणितज्ञों ने भारतीय अंक-पद्धति पर पुस्तकें भी लिखीं। अरबों की सहायता से ही भारतीय अंकों का यूरोप के देशों में प्रवेश हुआ।

यूरोप में भारतीय अंक

मिस्र की नील नदी के मुहाने के पास के अलेक्ज़ेंड्रिया बन्दरगाह से भारत के पुराने व्यापारी संबंध थे। भारतीय माल वहां पहुंचता था; व्यापारी भी वहां पहुंचते थे। लेन-देन होता होगा; हिसाब-किताब चलता होगा। एक-दूसरे के गिनती के तरीकों के बारे में भी जानकारी मिलती होगी। ईसा के बाद की कुछ शताब्दियों में भारतीय अंक वहां जरूर पहुंच गए होंगे। वहां से पश्चिमी एशिया के सीरिया आदि देशों और उत्तरी भूमध्यसागर के इटली आदि देशों में भारतीय अंक-पद्धति का ज्ञान पहुंचा होगा।

उस समय भारतीय अंक दक्षिणी यूरोप के देशों में पहुंचे भी होंगे तब भी वहां उनका उस समय प्रचार होना सम्भव नहीं था। क्योंकि उस समय यूरोप ज्ञान-विज्ञान के अंधकार की नींद में सोया पड़ा था। यूनान और रोम के वैभवशाली दिन बीत चुके थे। भारतीय अंक-पद्धति के महत्व को गणितज्ञ ही पहचान सकते थे, व्यापारी नहीं। आज भी हमारे देश के बनिये पुराने तरीके से ही अपने बहीखाते लिखते हैं। उनकी लिपि भी पुरानी और अशुद्ध होती है।

अरबों के प्रयास से यूरोप में पुनः ज्ञान-विज्ञान की हलचल शुरू हुई। आठवीं सदी के आरम्भ में अफ्रीका होते हुए अरबों ने स्पेन पर हमला बोल दिया था। उन्होंने फ्रान्स पर भी अधिकार कर लिया। स्पेन, फ्रान्स आदि देशों के ये अरब 'मूर' नाम से जाने जाते हैं। मूरों ने दक्षिण-पश्चिमी यूरोप पर लगभग पांच सौ साल तक शासन किया। वहां उन्होंने

तलेतला, गरनाता, कर्तबा, शेविली आदि स्थानों पर विद्याकेन्द्र स्थापित किए। इन विद्या-केन्द्रों में अरबी ग्रन्थों का अध्ययन होने लगा। इन अरबी ग्रन्थों में बहुत-से ग्रन्थ ऐसे थे जिनका यूनानी और संस्कृत भाषाओं से अनुवाद हुआ था।

स्पेन, फ्रान्स और इटली के ईसाई विद्वान इन विद्याकेन्द्रों में आकर अरबी ग्रन्थों का अध्ययन करने लगे। धीरे-धीरे उन्होंने इन ग्रन्थों का लातिन भाषा में अनुवाद करना शुरू कर दिया। इस प्रकार यूरोप के विद्वानों को न केवल अरबी ज्ञान की, बल्कि प्राचीन यूनानी और भारतीय ज्ञान-विज्ञान की भी जानकारी मिलने लगी। यूरोप में नए जागरण का युग शुरू हुआ।

ज्ञान-विज्ञान के लिए यूरोप मूरों का कितना ऋणी है, इसके बारे में गणित के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ **हूपर** ने अपने 'गणित के निर्माता' ग्रन्थ में लिखा है :

"बहुत-सी ऐसी बातें हैं जिनके लिए हम मूरों के कृतज्ञ हैं। उन्होंने औषधि और चिकित्सा विज्ञान संबंधी बहुत-सी बातें हमें दी हैं। धातु और चर्म-व्यवसाय की बहुत-सी विधियां उहोंने हमें सिखाई। उन्होंने स्पेन में जल-कूप, तालाब व नहरें खोदीं। सबसे बड़ी बात यह है कि उन्होंने अंधकार में सोए हुए असभ्य यूरोप में भारत व पूर्व के देशों के ज्ञान का प्रकाश फैलाया। हिन्द वालों से सीखी हुई उस अद्भुत नई अंक-पद्धति का उन्होंने ही स्पेन में प्रचार किया। इसी नई अंक-पद्धति ने आधुनिक विज्ञान और इंजीनियरी का मार्गदर्शन किया है।"

हम बता चुके हैं कि अरब देशों में शुरू में गुबार अंकों का इस्तेमाल हुआ था। अरबी गणितज्ञों ने इन अंकों का इस्तेमाल किया था और इनके बारे में पुस्तकें भी लिखी थीं। गुबार अंकों का विकास भारत के ब्राह्मी अंकों से हुआ था। अशोक के और नानाघाट के गुफालेखों में हम इन अंकों का पूर्वरूप देख सकते हैं। अब यही अंक यूरोप में पहुंचे।

दसवीं सदी में स्पेन में लिखी हुई कुछ लातिन की पुस्तकों में हमें भारतीय उत्पत्ति के

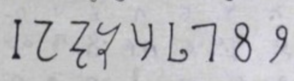

यूरोप में भारतीय अंक (दसवीं शताब्दी)

ये गुबार अंक देखने को मिलते हैं। उपर्युक्त अंक ९७६ ई. में स्पेन में लिखी गई एक पुस्तक में देखने को मिलते हैं।

दसवीं शताब्दी के कई ग्रन्थों में भारतीय अंक देखने को मिलते हैं। इसी शताब्दी का एक यूरोपीय विद्वान सेवाईल का **आइसोदोरस** अपनी 'ओरिजिन्स' पुस्तक में लिखता है — "...ऐसा ही अंकगणित के चिह्नों के बारे में है। भारतीयों की बुद्धि प्रखर है। अन्य देश अंकगणित, रेखागणित तथा कला-कौशल में उनसे पीछे हैं। नौ अंकों से वे बड़ी से बड़ी संख्या लिख सकते हैं।"

यूरोप में भारतीय अंकों का सबसे अधिक प्रचार करने का श्रेय है गणितज्ञ **लियोनार्दो 'फिबोनकी'** को। इटली के पीसा नगर में ११७५ ई. में 'फिबोनकी' का जन्म हुआ था। उसका पिता व्यापार करता था। लियोनार्दो की शिक्षा मूर पण्डितों की देखरेख में हुई थी।

प्रसिद्ध अरबी गणितज्ञ **अल्-ख्वारिज्मी** ने ८२५ ई. के आसपास गणित की एक पुस्तक लिखी थी। इस पुस्तक के आधार पर १२०२ ई. में लियोनार्दो ने 'लिबेर एबेकी' नाम का ग्रन्थ लिखा। फिबोनकी ने अपने इस ग्रन्थ में भारतीय अंकों के बारे में पूर्ण जानकारी दी और इनका खूब प्रचार किया। लियोनार्दो 'फिबोनकी' अपने समय में यूरोप के चोटी के गणितज्ञ थे। इसलिए उनके इस ग्रन्थ का लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा और तब धीरे-धीरे यूरोप में भारतीय अंक और अंक-पद्धति का प्रचार होने लगा। तब से १५ वीं सदी तक भारतीय अंकों के यूरोप में कैसे रूप रहें, इसे नीचे के चित्र से जाना जा सकता है :

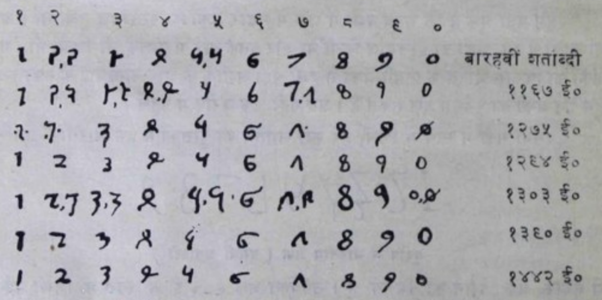

यूरोप में बारहवीं सदी से पंद्रहवीं सदी तक के भारतीय अंक

पंद्रहवीं सदी से यूरोप में पुस्तकें छपने लग गई थीं। तब अक्षरों और अंकों के टाइप बने। टाइप बनने से अंकों के रूप स्थिर हो गए। असल में, आज अंग्रेजी के साथ जिन अंकों का इस्तेमाल होता है, वे मूलतः भारतीय अंक हैं। इन अंकों का विकास भी भारत के ब्राह्मी अंकों से हुआ है। इसीलिए आज हम इन्हें **भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय अंक** कहते हैं।

शुरू-शुरू में केवल गणितज्ञों ने ही भारतीय अंकों को अपनाया था। यूरोप के व्यापारी और स्कूल रोमन अंकों का ही इस्तेमाल करते रहे। १६०० ई. तक यूरोप के स्कूलों में और १७०० ई. तक बहीखातों में रोमन अंकों का व्यवहार होता रहा। उसके बाद सारे यूरोप में भारतीय अंक स्वीकार कर लिए गए। आज सारे संसार में इसी भारतीय अंक-पद्धति का इस्तेमाल होता है।

यूरोप में और आज सारे संसार में चलने वाले इन अंकों को कुछ लोग 'अरबी अंक' कहते हैं। यूरोप वालों को अरबों से ये अंक मिले थे, इसीलिए शायद वे इन्हें अरबी अंक कहते हैं। परन्तु स्वयं अरबी विद्वानों ने इन्हें 'हिन्दसे' यानी हिन्द के अंकों का नाम दिया था। दर-असल, ये हमारे देश के अंक हैं, भारतीय अंक हैं। अंक-पद्धति भी भारतीय, अंक-संकेत भी भारतीय।

उपसंहार

सचमुच ही हमारे लिए यह बड़े गर्व की बात है कि आज सारे संसार में भारतीय अंक-पद्धति का व्यवहार होता है। परन्तु हमारे पूर्वजों का यह महान आविष्कार हमें कुछ सोचने के लिए भी मजबूर करता है।

शून्यवाली नई अंक-पद्धति का आविष्कार लगभग पहली शताब्दी में हुआ। इसको प्रसिद्धि मिलने के लिए और तीन-चार सौ साल का समय गुजरा। आर्यभट का समय (५०० ई.) आया। तब से अभिलेखों में इस नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल होने लगा। पर आर्यभट से भास्कराचार्य (११५० ई.) तक हमारे देश के महान गणितज्ञों को इस नई अंक-पद्धति का अंकों में इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ी। दसवीं शताब्दी से सर्वत्र नई अंक-पद्धति का व्यवहार होने लगा। लेकिन उसके बाद हमारे देश में ज्योतिष और गणित के क्षेत्र में नया कुछ नहीं खोजा गया। भास्कराचार्य के बाद सात सौ साल तक हमारे देश में एक भी चोटी का गणितज्ञ पैदा नहीं हुआ। हमारे देश के पण्डितों ने अपनी इस नई अंक-पद्धति से कोई विशेष लाभ नहीं उठाया। हमारे पण्डित पुराणपंथी बने रहे।

दूसरी ओर, दसवीं शताब्दी के बाद भारतीय अंक-पद्धति का यूरोप में प्रचार हुआ तो वहां के गणितज्ञों ने इससे खूब लाभ उठाया। वहां गणित ने तेजी से उन्नति की। आधुनिक गणित का विकास यूरोप में हुआ।

हमें यह भी जान लेना चाहिए कि दस अंकोंवाली अंक-पद्धति ही गणना की सबसे उत्तम

उपसंहार

सचमुच ही हमारे लिए यह बड़े गर्व की बात है कि आज सारे संसार में भारतीय अंक-पद्धति का व्यवहार होता है। परन्तु हमारे पूर्वजों का यह महान आविष्कार हमें कुछ सोचने के लिए भी मजबूर करता है।

शून्यवाली नई अंक-पद्धति का आविष्कार लगभग पहली शताब्दी में हुआ। इसको प्रसिद्धि मिलने के लिए और तीन-चार सौ साल का समय गुजरा। आर्यभट का समय (५०० ई.) आया। तब से अभिलेखों में इस नई अंक-पद्धति का इस्तेमाल होने लगा। पर आर्यभट से भास्कराचार्य (११५० ई.) तक हमारे देश के महान गणितज्ञों को इस नई अंक-पद्धति का अंकों में इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ी। दसवीं शताब्दी से सर्वत्र नई अंक-पद्धति का व्यवहार होने लगा। लेकिन उसके बाद हमारे देश में ज्योतिष और गणित के क्षेत्र में नया कुछ नहीं खोजा गया। भास्कराचार्य के बाद सात सौ साल तक हमारे देश में एक भी चोटी का गणितज्ञ पैदा नहीं हुआ। हमारे देश के पण्डितों ने अपनी इस नई अंक-पद्धति से कोई विशेष लाभ नहीं उठाया। हमारे पण्डित पुराणपंथी बने रहे।

दूसरी ओर, दसवीं शताब्दी के बाद भारतीय अंक-पद्धति का यूरोप में प्रचार हुआ तो वहां के गणितज्ञों ने इससे खूब लाभ उठाया। वहां गणित ने तेजी से उन्नति की। आधुनिक गणित का विकास यूरोप में हुआ।

हमें यह भी जान लेना चाहिए कि दस अंकोंवाली अंक-पद्धति ही गणना की सबसे उत्तम

पद्धति नहीं है। गणितज्ञ इस बात को जानते हैं कि गणना का आधार १२ या १६ रहे तो गणना में अधिक सुविधा है। हमारे हाथों की उंगलियां दस न होकर १२ या १६ होती तो आज शायद गणना का आधार १२ या १६ ही होता। गणना के लिए किसी भी आधार को चुना जा सकता है।

आधुनिक इलेक्ट्रोनिक गणकयंत्रों में दो अंकों से— ० और १ से— गणनाएं होती हैं। गणकयंत्रों का इस्तेमाल धीरे-धीरे बढ़ रहा है। आगे शायद ऐसा भी समय आए जब आदमी पाटी या कागज पर गणनाएं करना छोड़ दे और अपनी सारी गणनाएं गणकयंत्रों के जिम्मे सौंप दे। तब गणना में केवल दो अंकों का अस्तित्व रह जाएगा — ० और १!